# ढोल
## और अन्य कहानियाँ

## राजेन्द्र यादव की अन्य रचनाएँ

**उपन्यास**

सारा आकाश, उखडे हुए लोग, शह और मात, कुलटा, एक इच मुस्कान (मन्नू भण्डारी के साथ), अनदेखे अनजान पुल, मत्र-विद्ध ।

**कहानी-सग्रह**

देवताओ की मूर्तियाँ, खेल-खिलौने, जहाँ लक्ष्मी कैद है, अभिमन्यु की आत्म-हत्या, छोटे-छोटे ताजमहल किनारे से किनारे तक, प्रतीक्षा, टूटना, अपने पार, प्रिय कहानियाँ, श्रेष्ठ कहानियाँ, ढोल

**कहानी-सकलन**

एक दुनिया : समानान्तर, कथा-यात्रा, नये कहानीकार सीरीज की पाँच पुस्तकें

**कविता-सग्रह**

आवाज तेरी है

**समीक्षा**

कहानी : स्वरूप और सवेदना

तैयारी मे—वृहन्नला, नाम से बडा उपन्यास

# ढोल

## और अन्य कहानियाँ

राजेन्द्र यादव

अक्षर प्रकाशन प्रा॰ लि॰

प्रथम सस्करण

१ मार्च '७२

मूल्य

छ. रुपये

प्रकाशक

अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

२/३६ अन्सारी रोड,

दरियागज, दिल्ली-६

मुद्रक

जयभारत कम्पोजिंग एजेंसी

सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस. दिल्ली-३२

दृष्टिकोण

चीन की सास्कृतिक क्रान्ति के बारे मे पश्चिमी पत्रो के माध्यम से बहुत कुछ पढने को मिलता है । कुछ सच, अधिकाश झूठ । एक समाचार यह भी है कि वहाँ वे सारी लोक-कथाएँ समाप्त कर दी गयी है जिनमे 'एक था राजा' से कहानी शुरू होती है । ये कहानियाँ सामन्त-काल की ध्वसावशेष है और इनमे जनता नही राजा-रानियाँ ही छाये हुए हैं। उस समय सर्वसाधारण कैसे रहते थे, उनकी क्या समस्याए थीं, इसका कही कोई पता नही चलता । उधर राजाओ को प्राय सर्व-गुण सम्पन्न और समस्त मानवीय विशेषणो से विभूषित किया गया है ।

लोक-कथाओ के पीछे युक्ति कोई नही होती, हो नही सकती । जिस तरह वे बनती, बिगडती या गढी जाती है उनके पार कही जनता की आकाक्षाएं और मानसिक अभ्यास ही होते हैं । लेकिन एक बात चकित जरूर करती है । कही भी कुछ अच्छा, मेधावी और प्रतिभाशाली या महान् और विलक्षण करनेवाले, प्राय राजा और राजकुमार ही होते है—कही-कही तो उनकी पहचान भी उनके सुन्दर होने से हो जाती है। साधारण लोगो के बीच अपने कार्यों और लक्षणो से वे बहुत जल्दी ही प्रमाणित कर देते हैं कि वे राजकुमार या राजकुमारी है—निर्वासित या

वेश-बदले हुए। इन कहानियो के अन्त प्राय जनता के न्याय-स्वप्न होते हैं। अत्याचारी राजा का पतन होता है, सौतेली रानियाँ पश्चाताप करती है और षडयन्त्रकारी चाचा या मन्त्री अन्त मे समाप्त होते है। सिहासन का वास्तविक हकदार एकदिन सामने आकर अभिषेक करा ही लेता है। इन कहानियों मे सदियो की मानसिक गुलामी निश्चित रूप से देखी जा सकती है जहा राजा और राजकुमारो के बिना अच्छाई की कल्पना ही नही की जा सकती, शायद बुराई की भी नही। काले और सफेद, दोनो गुण वहाँ साफ-साफ बँटे हुए है और उसी वर्ग तक सीमित है। जनता केवल उन्हे भोगती है, न्याय और पुरस्कार की याचना करती है।

नामो और शब्दो के पीछे से उन्हे व्यजित करने वाली वास्तविकताए जब हट जाती है तो वे केवल मन की चीज रह जाते है। यानी वहाँ एक तरह की रूपहीनता या एबस्ट्रैक्शन आजाती है। शब्द या तो केवल बिम्ब रह जाते हैं या क्रमश प्रतीक बनने लगते हैं। बीती हुई सस्कृति के शब्द वही सब व्यक्त नही करते जो अपने वर्तमान मे किया करते थे। इन्ही शब्दो, बिम्बो और प्रतीको से भाषा समृद्ध होती है—अच्छे या बुरे से अलग, वे हमारी सास्कृतिक-धरोहर बन जाते है। 'जन्म-जन्मान्तर' का अर्थ लम्बे समय से ही है, किसी धार्मिक विश्वास से नही। बगाली मुसलमान 'बाबा आदम' के जमाने को नही 'मान्धाता काल' को जानता है। यहां निश्चय ही मान्धाता, राम के पूर्वज नही है।

कथाकार के लिए सास्कृतिक-बिम्ब या आर्क-टाइप सकेत-शब्द सबसे अधिक सार्थक और सहायक होते है। अगर उसे व्यक्तिगत बिम्ब और व्यक्तिगत प्रतीक-चित्रो का अविष्कार स्वय ही करना पडे तो शायद वह इसी मे उलझकर रह जायेगा। इस प्रयत्न मे हो सकता है कहने वाली बात पीछे छूट जाये। नये शब्दो, चित्रो को सस्कार और व्याप्ति या

पुराने अर्थों के नये सदर्भ और प्रतीक देने का कार्य तो बड़े स्वाभाविक ढग से रचना-प्रक्रिया के दौरान खुद-बखुद होता रहता है। मैं समझता हूँ कि यह कार्य जितना रूपको और स्वप्न-कथाओ मे होता है, उतना शायद ही किसी और शैली मे होता हो।

मैं साग्रह कहना चाहूँगा कि मेरी ये कहानियाँ--आप इन्हे रूपक, फैण्टेसी, प्रतीक या किसी भी कटघरे मे रक्खें—आज की सच्चाइयो की कहानियाँ हैं। सारी दुनिया मे पता नही कब से इन राजा-राजकुमारियो को कथाकार अपनी बात कहने के लिए इस्तेमाल करता आया है। बोल-चाल के मुहावरे से अलग या तो ये शब्द कही कोई विशिष्टता ही ध्वनित नही करते या फिर इनकी विशिष्टता केवल जन-सामान्य की 'साधारणता' ढोने के काम आती है। कभी-कभी तो ये राजा-राजकुमार इतने साधारण और विशेषताविहीन होते है कि लगता है, इनके पीछे कथाकार का दबा हुआ व्यग्य ही बोल रहा है। सर्वान्ते के क्विक्ज़ोट को यहाँ न भी घसीटा जाये तो भी उत्तर-प्रदेश और राजस्थान के 'राजा' लकडी काट-कर जिन्दगी बसर करते है, 'रानियाँ' चक्की पीसती और रोटियाँ बना-कर राजा को खेत मे खाना देने जाती है। हाँ, हल्का-सा एक आरोप ज़रूर कथाकार पर लगाया जा सकता है ये शब्द उस समय अपनी वास्तविकताओ के कारण विशिष्ट थे तो आज अपने प्रतीकार्थो के कारण। यानी उनकी विशिष्टता को जाने-अन-जाने बरकरार ज़रूर रक्खा गया है। बहरहाल, कथाकार का सामान्य से सामान्य पात्र को चुनना ही उसे इतनी विशेषता तो दे ही देता है।

जैसा कि मैंने कहा, किस कोटि मे इन कहानियो को रखा जायेगा, मैं नही जानता। मेरे लिए तो सभी कोटियाँ और विधाएँ इतनी घुली-मिली और उलझी हुई चीज़े है कि इनके बाहरी पक्ष को लेकर मैं किसी नतीजे पर नही पहुँच पाता। फेबुल, पैरेबुल, फैण्टेसी या इस कोटि की

प्रायः सारी रचनाएँ आन्तरिक रूप से बडी आसानी से एक दूसरे मे खपायी जा सकती हैं। यही क्यो, 'शुद्ध' कविता, 'शुद्ध' कहानी, 'शुद्ध' नाटक और 'शुद्ध' उपन्यास की खोज का एक दूसरा पहलू यह भी है कि आज सारी विधाएँ एक दूसरे मे गडमड हो गयी है—एक दूसरे मे अतिक्रमण कर रही है। यह स्थिति विधाओ या रचनाकार की असमर्थता-असम्पूर्णता की नही, इससे अलग है। निश्चय ही रचनाकार आज किसी ऐसे बाहरी, लेकिन गहरे सास्कृतिक और मानसिक सकट के सामने आ खडा हुआ है कि सारी विधाओ की अपनी अस्मिताए और इयत्ताए खो गयी हैं। किसी बाहरी आक्रमण का दबाव, और रोदता-रेला या तो छोटी-बडी इकाइयो को मान्यता ही नही देता या फिर हम ही सारे मत-भेद भूलकर उसका सामना करने की बात सोचने लगते है। यह सचेत चुनाव नही, स्थिति की मजबूरी है। कौन जाने अभिव्यक्ति-मात्र की यह सक्रान्ति, अपने व्यर्थ हो जाने के अहसास से आयी है या किसी आसन्न-सकट के सामने अपनी सीमाए और मर्यादाए खुद ही खो बैठी है।

अपनी इन कहानियो के लिए भी यही कह सकता हूँ कि यहाँ विधा बिल्कुल भी महत्वपूर्ण नही है . महत्वपूर्ण है अपने तात्कालिक वर्तमान का वह दबाव जिसमे होकर, या जिससे छूट कर हम इन कहानियो मे पहुँचते है .लिखते हुए या पढते हुए। कुछ के लिये यह 'पलायन' प्रीतिकर हो सकता है। वे यह तर्क भी दे सकते हैं कि इस अवकाश के बाद अधिक ताजा होकर अपने वर्तमान से जूझ सकेंगे। लेकिन मैं ..या आज का कोई भी लेखक . ऐसी ऐयाशी नही पाल सकता। मैंने अपने परिवेश से भागने के लिए कहानियाँ नही लिखी, उसे तोडकर, या वेधकर, गहराई और सार्थकता से उसे समझने के लिए ही इन्हे लिखा है। परिवेश और उसमे साँस लेते व्यक्ति, दोनो के जीवन्त-सम्बन्ध को पकडने केलिए जिस भाषा या प्रतीको, बिम्बो और साकेतिकता की तलाश मैंने पहली कहानियों मे की थी, उन्ही का अधिक गहरा और सार्थक प्रयोग कभी-कभी इन कहानियो की ओर लेगया है। मेरे साथ [illegible]

पहले के बहुत लोगो को लेजाता रहा है।

पहले के लोगो ने बाहरी और भीतरी सच्चाइयो का बडा सुविधा-जनक विभाजन कर लिया था और अपना-अपना क्षेत्र चुन कर वे उनसे जूझते थे। हमे लगा कि यह विभाजन नकली है और दोनो सच्चाइयाँ एक दूसरे मे होकर गुजरती ही नही, उन्हे बनाती-बिगाडती और दिशा देती हैं। आदमी इन दोनो के हाथो ढलता भी है और स्वय इन्हे ढालने का निर्णय भी लेता है। इस खोज मे पाया कि बात केवल इतनी ही नही है, एक सच्चाई दूसरी को ढँकने, दबाने के लिए आड की तरह भी काम मे लायी जाती है। एक को पकडने के प्रयत्न मे दूसरी का हाथ छूट जाता है। यही नही, अपने परिवेश, अपनी अनुभूति और अपने क्षण तक ही सीमित और सच्चे होने के आग्रह मे हम उन्हे बनाने-ढालने वाले बडे सदर्भो से कट जाते हैं। तब लगा कि इस 'अपने वृत्त' को तोड या छोडकर ही उसे सही तरह समझा जा सकेगा।

जो कुछ हमारे सवेदन-वृत्त मे आ गया है, वही हमारा यथार्थ है, हमारे लिए यथार्थ है। बाकी सब सूचनात्मक वास्तविकता है। लेकिन इस यथार्थ को कलात्मक रूप से सम्प्रेषणीय बनाने के लिए जरूरी है कि हम उसे अपने से हट या उठकर देख सकें, उसे माध्यम की तरह इस्ते-माल कर सकें। कलाकार अपने किशोर काल मे 'अपने यथार्थ' से असम्पृक्त नही हो पाता, वह या तो उसमे रस लेता है या उसे जस्टिफाई करता है, और जिन्दगी-भर कला के नाम पर आत्मकथा के टुकडे देता रहता है।

मैं यह नही कहता कि हर कला कही-न-कही कलाकार की आत्म-कथा नही होती, —होती है। लेकिन बिल्कुल ही दूसरे धरातल पर। वास्तविकता को अपनी सवेदना का अग बनाने की तनाव और सघर्ष-

भरी प्रक्रिया की कथा के रूप मे ही कला आत्मकथा हो सकती है, जीवन वृत के दैनिक विवरण को पच्चीकारी के रूप मे नही। जीवन के यथार्थ को भरपूर जीने, यानी बाहरी वास्तविकता को अपने भीतर से गुजरते हुए, बदलते और बिखरते-बनते, रूप लेते हुए देख सकने की तटस्थता कला की पहली और मौलिक शर्त है। वह अभिनेता कच्चा है, जो केवल जिये हुए चरित्र को ही दे सकता है, यानी अपने या अपने जैसे चरित्र का ही निर्वाह कर पाता है, दिये हुए चरित्र को जी सकना उसकी कला का विकास है।

यह सही है कि जिये हुए का आश्वासन हमे बल और प्रेरणा-दृढ बनाता है, लेकिन उस आश्वासन का विकास कही कलाकार का विकास भी है। दूसरे शब्दो मे वह अपने-आपको अतिक्रमित करता चलता है। अपने यथार्थ को और-और यथार्थ से जोडता है।

लेकिन जब बाहरी और भीतरी किसी भी यथार्थ को अपना विवेक और मन समर्थन न देता हो—और सब-कुछ बकवास या एब्सर्ड लगता हो, उस समय दो ही विकल्प है कि या तो भोले बने रहकर हम परम गभीरता से उसमे रस लेते रहे, उसे तरह-तरह के अर्थ और व्याख्या देते रहें—या उससे अलग हटकर उसकी खिल्ली उडाएँ—उसे उपहासास्पद रूप मे पेश करे, खूबसूरत औरतो के मूछे बना दे, गधे के शरीर पर आदमी का मुँह लगा दें, शेर को बिनोबा-दाढी भेट कर दे। यह उस एब्सडिटी से पैदा होने वाली वितृष्णा—डिस्गस्ट, प्रतिरोध, प्रोटेस्ट—नाम जो भी दे लें, उसी का इज़हार है और बिना उस डिस्गस्ट के कलाकार होने का कोई मतलब नही है।

विधा जितनी ही अपर्याप्त और नाकाफी होती है; प्रयोग की गुजाइश और सभावना उतनी ही अधिक रहती है। चित्रकला की सँकरी सीमाओ ने ही उसमे सबसे अधिक प्रयोग कर सकने, उसे असाधारण गहराइयाँ देने की चुनौती पैदा की है। विधा के नाकाफी होने की सचाई

का साक्षात्कार, अपनी असामर्थ्य का स्वीकार ही हो, यह भी मैं नही मानता। जिन कहानियो ने चर्चा और प्रसिद्धि पायी है, ऐसी कहानियाँ मैं चाहने पर आज नही लिख सकता, ऐसा नही है। सही यह है कि मुझे वे बहुत अधूरी और असम्पूर्ण लगती है। उन्हे आज लिखना बेमानी लगता है। कोई भी रचनात्मक कलाकार उसी रचना को दुबारा नही लिख सकता।

यथार्थ को अपनी सवेदना का अग बनाकर उससे असम्पृक्त हो जाना हमे उसके विश्लेषण और विशेषण तलाश करने मे सहायक होता है। हम उसकी चीर-फाड भी कर सकते हैं, खिल्ली उड़ा सकते हैं और साथ ही उसे बडी सच्चाइयो से जोडे रख सकते हैं। बड़ी सच्चाइयो से न जोडना, दिग्भ्राति और सिनिसिज़्म को जन्म देता है। यो हर आधुनिक आज 'सिनिक' भी है। अपने यथार्थ के कुरूप और एब्सर्ड होने का लगाव-भरा अहसास हमे ऐसी तटस्थ नुक्ताचीनी भी दे सकता है, जो 'सिनिसिज़्म' जैसी लगे।

हर चीज़ वैसी ही नही है जैसी दीखती है। हमारी बातचीत, हमारे आपसी व्यवहार, हमारे कार्य-कलाप अलग-अलग स्तरो और खण्डो मे चलते हैं। इन दुहरे-तिहरे धरातलो को पकडने की भी कोशिशे हुई हैं। एक ही धरातल पर जीने वाले अखण्डित व्यक्तित्व, द्वन्द और द्विधा-रहित व्यक्ति कभी हुए हैं या नही मुझे नही पता। लेकिन हम तो खण्ड-खण्ड मे और बिखरे हुए जीने के लिए ही अभिशप्त हैं। हमारी सच्चाई यही है कि हमारे मतव्य, व्यवहार और स्वप्नो मे कही कोई सगति नही है। हो भी नही सकती। छायावादी कवि यह कह कर रो सकता था कि 'क्रिया दूर, कुछ स्वप्न भिन्न हैं, इच्छा क्यो पूरी हो मन की। एक दूसरे से न मिल सके, यह बिडम्बना है आज के जीवन की' लेकिनयह

आदमी की यह स्थिति नही, नियति है। यह बिडम्बना और विसगति उसे दयनीय नही, बेहूदा और एब्सर्ड लगती है। और वह इसे इसकी बेहूदगी मे ही पकडना चाहता है अन्तिम अर्थहीनता और व्यर्थता को समझकर ही कही कोई सार्थकता तलाश की जा सके। हो सकता है यही कारण हो कि मैं एक कहानी, एक उपन्यास, एक कविता या एक नाटक नही लिखता...आज की, परिवेश की और अपनी वास्तविकता के सम्बन्धो, सघर्षों और असगतियो के मूत्र खोजकर किसी भी माध्यम से उन्हे व्यक्त कर देना चाहता हूँ। इसे समग्र-अभिव्यक्ति ही कहा जा सकेगा।

सच बात तो यह है कि इतिहास मे बहुत कम ऐसे अवसर आये हैं जब कोई शास्त्र, कोई सहिता या कोई नियम पुस्तक, आपने आस-पास की कला, साहित्य-सस्कृति को समझने मे इतने असमर्थ और व्यर्थ हो गये हो। शास्त्र और ज़िदगी की दूरी इतनी अधिक बढ गयी है कि एक ज़मीन पर खडे होकर ज़िदगी बकवास, 'न-जीने लायक' या पता नही 'किस नरक मे जाती हुई' लगती है और दूसरे सिरे से देखें तो शास्त्र व्यर्थ, अप्रासंगिक और किसी बहुत पिछड़े समाज के लिए बनाये गये दस्तावेज लगते हैं। वेदों में नवीनतम् वैज्ञानिक-उपलब्धियों के सूत्र और रस-सिद्धान्त से आधुनिक साहित्य को समझने का कातर अहंकार तो आज दयनीय भी नहीं लगता। अनिवार्यता केवल एक ही हमारे सामने रह जाती है कि किसी भी शास्त्र और नियम से ज़िन्दगी नहीं चलती... वह चलती है अपनी तरह, अपने नियम से. हजारों स्मृतियाँ और शास्त्र बने और भुला दिये गये। ज़िन्दगी और अपने परिवेश को समझ कर आज की रचना को समझा जा सकता है...बासी धारणाओं के साथ नहीं।

इसलिए मेरे सामने किसी भी विधा की कभी कोई सुविधा...

सैक्टिटी  नही रही है। कुछ कहानियाँ बच्चो के लिए कहने की कोशिश की तो शीघ्र ही पाया कि वह केवल अपनी बात कहने की सुविधा के लिए स्वीकार किया गया एक रूप-भर ही था। इस सग्रह मे जहाँ 'ढोल' और 'सिहवाहिनी' जैसी कहानियाँ हैं 'वही घर की तलाश, और 'परी नही मरती' भी है। हाँ, 'अन्धाशिल्पी और आँखो वाली राजकुमारी' का धरातल बिलकुल अलग है और वह इस सग्रह की सबसे पुरानी कहानी है . लगभग अठारह-बीस वर्ष पहले लिखी गयी। तब शब्दो का मोह था, कुछ रूमानी-स्थितियाँ मन को अच्छी लगती थी और 'चित्रलेखा' जैसे स्मार्ट वाक्यो मे चमत्कार पैदा करने का कैशोर्य था। शायद कहने के लिए भी कुछ-न-कुछ रहा ही होगा। लेकिन वह निश्चय ही ज़िंदगी मे उतरने से पहले लिखी गयी कहानी है। वे ऊँचे-ऊँचे तर्क, वे नदियो और पहाडो पर उन्मुक्त विचरने वाले लोग...वे केवल अपनी इच्छाओ और सपनो से ही चलने वाली छायाएँ आज तो अपने भीतर उनका होना ही या तो अपराध लगता है या दभ .

'अभिमन्यु की आत्महत्या' से अपने आपकी स्थिति को समझने का एक दूसरा दौर शुरू हुआ था—इसी लिए शायद यह कहानी मुझे प्यारी भी है। ५५-५६ मे लिखी गयी थी। बीच मे इस नाम का संग्रह भी आया। वे सारी कहानियाँ दूसरे सग्रहो मे बाँट दी हैं।

●●

# सिंहवाहिनी

एक थी राजकुमारी। बहुत चचल, बहुत फुर्तीली, बहुत सुन्दर और बहुत विदुषी। उसकी एक ही इच्छा थी, ऐसा कुछ किया जाय जो अद्‌भुत हो, नया हो और अभी तक किसी ने न किया हो। सभी ने स्वयवर किये है, सभी राजकुमारो के साथ घोडो पर बैठकर चली गयी हैं और सभी ने बाद मे रानी बनकर महलो की शोभा बढाई है। यही सब होना है तो इतने साधन होने का लाभ क्या है? किसी ने भी तो ऐसा अद्‌भुत कुछ नही किया कि लगे हाँ, अपने किये मे वह अकेली थी। राजकुमारी ने दुनिया के अच्छे से अच्छे फूल लगाये, बागवानी की, अजूबे इकट्ठे किये, शहरो और जगलो मे भटकी, पहाडो और समुद्रो मे चक्कर लगाये। लेकिन जो वह करना चाहती थी, वही नही हुआ। राजा और राजमाता ने तरह-तरह के वर सुझाये, हर तरह उनका मन बहलाने की काशिश की लेकिन राजकुमारी थी कि उदास और दुखी ही होती चली गयी। माँ-बाप चिन्तित, सहेलियाँ परेशान, मत्री दुखी। इतना सब कुछ है, लेकिन वही नही है जो राजकुमारी चाहती है...

'राजकुमारी जी, आप मुँह से तो कुछ बोलिए। आपके मुँह से निकली बात जरूर पूरी होगी।' उसकी घनिष्ठतम सहेली ने एक दिन

हमराज़ बनने के लिए पूछा ।

'मुझे खुद कुछ नही पता मैं ऐसा कुछ चाहती हूँ जिसमे खतरा हो, रोमाच हो . '

'तो भी...'

'शेर पालूँगी...ज़िन्दा शेर पालूँगी ।' झुझलाकर राजकुमारी के मुँह से निकला । अचानक बात उसे खुद ही बहुत सम्मोहक लगी । वह शेर पालेगी और उसे अपने पास रक्खेगी, साथ रक्खेगी । जो सुनेगा ग रह जायेगा । इतिहास मे उसका नाम होगा 'शेरोवाली राजकुमारी' . सिहवाहिनी

सहेली भय से चौक उठी । मुँह से निकला, 'यह कौन मुश्किल है ? कल ही शेर आ जायेगा । लेकिन राजकुमारी, शेरो जैसे कुत्ते मिल जायेंगे...एक से एक बडे और भयानक...'

'नही, शेर ही पालूँगी . छोटा-मोटा नही जगल का सबसे बडा और खूँखार शेर .. ऐसा कि लोग देखे तो भय से साँस रुक जाये...'

'शेर पकडवाना तो मुश्किल नही है, लेकिन राजकुमारी, 'सहेली ने सोचकर बताया, 'उसे रखना मुश्किल काम है, पिंजरे मे रखना होगा...'

'नही, खुला रखूँगी और अपने साथ ही रखूँगी ।' आत्म-विश्वास से उसकी आखे अजीब हिंस्र-भाव से चमक उठी, 'देखूँ तो सही प्यार से शेर को बस मे करने की बात सच है या झूठ '

राजकुमारी के चेहरे की ओर देखती सहेली चुप रह गयी । वह होश मे बोल रही है या बेहोशी मे, लेकिन वह केवल सिर्फ़ बोल नही रही, कही अपने-आप को वचन दे रही है । सहेली गहरी साँस लेकर चुप हो गयी । उसने अगले दिन राजा को बताया और शिकारियो के दल के दल शेर पकडने दौड पडे । जँगलो का सबसे बडा और खूँखार शेर पकडवा कर मगवाया गया । चुस्त, तगडा और बिजली की कौध जैसा फुर्तीला...सचमुच ऐसे शेर बहुत कम देखने को मिलते हैं । पकडने

वालो को राजा ने मुँह मागा इनाम दिया।

राजकुमारी पिंजरे के पास गयी तो बदबू के मारे उसका सिर फटने लगा, पास से देखा पल-भर को साँस रुक गयी। उसे लगा, आधा उत्साह ठण्डा पड गया है, इसे पालना तो बहुत मुश्किल होगा। नाक और मुँह पर कपडा रखे वह कुछ देर उसकी खूँखार ग्राँखो, छुरे-से दाँतो और गुस्से मे फनफनाती मूँछो को देखती रही—लेकिन आँखे थी कि उसके चिकने, गठीले और तगडे शरीर से हटती ही नही थी। बधे सॉपो-सी सलवटे कैसी तडपती थी, फैलती-सिकुडती पुतलियो के भीतर जैसे अगारे चमकते हो। लौटकर वह रातभर परेशान रही, शेर पाला जाय या नही। कहाँ जजाल मे फसेगी। लेकिन सारे समय जैसे ग्रधेरे मे सलवटो-सा कुछ तडपता था और दो दहकते ग्रगारे उसके होश की तहो मे उतरते जाते थे। उसके भीतर कुछ था जो किसी ऐसे ही 'खतरे' की तलाश मे उसे पागल बनाये था। पता नही क्या था। उस भयानक और खूँखार मे कि वह ग्राकर्षण मे बधी बार-बार वही चली जाती और बिना पलकें झपके उसे देखती रहती—मुग्ध और सम्मोहित। तनी हुई नसे झनझनाती रहती और शरीर पसीने से तर-बतर हो जाता। ग्रपनी इस हालत पर खुद ही झेंपती वह इस तरह लौट आती जैसे मीलो का सफर करके थक गयी हो। सारे दिन शेर दहाडता, गुस्से से हुकार मारता। पिंजरे की सलाखे झनझनाती रहती ग्रौर पूरे राजमहल गूँजते रहते। कच्चा मास खाता था, सारे पिंजरे को गदा रखता था ग्रौर मुह से लार टपकाता रहता। बदबू थी कि पास खडे रहना मुश्किल। उसके गुस्से ग्रौर झुझलाहट को देखकर दिल धक्-धक् करता कि अभी इसने पिंजरा तोडा और आस-पास दो चार का सफाया किया। लेकिन जब तृप्ति ग्रौर आलस मे होता बडा निरीह ग्रौर भोला लगता, गद्दी जैसे पजो से मुँह पोछता पूछ घुमाकर मच्छर-मक्खिया उडाता, गुस्से मे गदा जैसी इधर-उधर पडती पूँछ चँवर की तरह मुलायम हो जाती—सागर की गरज की तरह उसकी गुर्राहट गूजती। उसकी हर स्थिति को देखकर

राजकुमारी को भय और कुतूहल साथ-साथ होते।

काफी समय तो राजकुमारी असमजस मे ही पडी रही इसे पालना तो अच्छी खासी मुसीबत हो जायेगी। कभी वह अपनी राजसी साज-सजावट को देखती, खूबसूरत गलीचे, रग-बिरगे परदे और फूलो, खुश-बुओ मे महकता माहौल। शेर के आने से सब उलट-पलट हो जायेगा, दुर्गन्ध-ही-दुर्गन्ध भर जायेगी। यह भी मन मे आया कि शेर को बगीचे के पिजरे मे ही रहने दे और फूलो-क्यारियो की तरह या दूसरे पालतू जानवरो की तरह रोज उसे भी देख आया करे। न तो शेर को तकलीफ होगी और न अपनी व्यवस्था के अस्त-व्यस्त होने का डर रहेगा। लेकिन कोई था कि न उसे सोने देता था, न जागने। रात-दिन उसे बेचैन रखता और मन होता कि पिजरे के पास ही खडी रहे। यह भी कोई बात हुई। इस तरह तो जगल मे जाने कितने शेर है और महलो मे जाने कितनी राजकुमारियाँ है? उनसे क्या? उसे तो अपना शेर चाहिए, पिजरे और रस्सियो मे बँधा नही, कुत्ते-बिल्ली की तरह आस-पास खुला-खेलना शेर...तभी तो वह सारी दुनियाँ मे, इतिहास मे शेरवाली राज-कुमारी कहकर जानी जायेगी सहेली की गवाही मे उसने अपने-आप को यही तो वचन दिया है।

सच पूछो तो राजकुमारी को न अब उस वचन की याद थी और न इस बात का खयाल था कि उसे कुछ अद्भुत अनोखा करना है। वह तो बेहोश थी और सामने वह 'खतरा' था जिसकी उसके भीतर किसी को तलाश थी। रोज वह पिजरे के पास जाती और एकटक बँधी उसे देखा करती, उसके गुस्से-नाराजी, सन्तोष और विश्राम सभी समझने की कोशिश करती। जितना ही शेर को पालना परेशानी, मुसीबत और दिक्कतो भरा लगता, उतनी ही उसकी जिद बढती जाती। जो भी हो, अब इसे पालना तो है ही। स्थिति पर अब उसका कोई बस नही है। सारी व्यवस्था उलट-पलट हो जायेगी, सारा समय घिर जायेगा न जाने कितने खतरे और झझट बढ जायेंगे, लेकिन कोई बात नही। शेर को

पालतू बनाने के सन्तोष और शेर के साथ रहने के यश ने नशे की तरह उसे बेबस कर डाला था। शेर से नही, अपने भीतर की आदिम और हिस्र पशुता से उसे जूझना है और इसके लिए योगियो की तरह तपस्या करनी होगी ताकि वह मर्व-शक्तिमान सिहवाहनी हो जाये

और अपनी बात उसे इस रूप मे इतनी अच्छी लगी कि उसने सहेली से कहा। वह छटते ही बोली, 'भीतर की आदिम-पशुता को जीतने और सिहवाहिनी होने का सपना तो बेशक बडा मादक है, लेकिन राजकुमारी जी, एक बात का ध्यान रखिए शेर का सवार न मरता है न जीता ऐसा शेर जब विद्रोह कर बैठता है तो उसके अयाल पकडे बैठे रहने के सिवा कोई रास्ता नही बचता, उतरते ही खा जायेगा. जब तक ऊपर बैठे रहो तब तक वह कुछ नही कर पाता, लेकिन आदमी और पशु की ताकत मे अन्तर तो है ही, एक दिन हारना तो आदमी को ही होता है

राजकुमारी सपने की दूरियो से बोली, 'आदमी को क्यो हारना होगा ? नही, आदमी को बिलकुल नही हारना होगा। यह लडाई विवेक और पशुता की लडाई है और इसमे हारेगा पशु ही उसे पालतू होना ही होगा

सहेली मुसकुराई, 'देख लीजिए, . मन मे पशुता और विवेक का आपने जैसा बटवारा कर लिया है, असलियत मे होगा वैसा नही

राजकुमारी हस पडी, 'मुझसे बहस मत कर। मेरा अपने पर वस नही है। जो होता है होने दो। हार-जीत का फैसला करने का मुझे होश नही है। मुझे कुछ नही सूझना।' फिर कुछ सोचने लगी, 'मुझे लगता है, इसे मै पाल लूंगी। पहले पास जाते ही बदबू से दिमाग की नसे फटती हुई लगती थी, आस-पास खडे रहना मुश्किल था। कच्चे मास का इस तरह भचड भचड खाना देखा नही जाता था, उबकाई आती थी, दाँत, आँखे, पजे और पूरे शरीर को देखकर भय और घिन से फुरहरी आती थी — वह सब कम होता जा रहा है। अब वैसा कुछ अजब भी

नही लगता । भयानक और हिंस्र का भी अपना एक सौन्दर्य है, इसे अब मैं ज्यादा शिद्दत और ज्यादा गहराई से देख पाती हूँ । लगता है उसी ने मुझे अधा कर दिया है । रोज़ घण्टो बैठकर उसे ताकते रहने मे मुझे एक अजीब गोपन-सुख मिलता है, वह मेरी आदत होती जा रही है । उसके बिना मुझे अपना दिन और अपना होना अधूरा लगता है । लगता है जैसे अब हम दोनो एक दूसरे को पहचानने लगे है । उसकी आखो मे अब परिचय की एक मुलायम-सी चमक आ जाती है । उसका सारा हुलिया बदल जाता है । वह मेरी राह देखता है और जब तक मैं पहुच नही जाती, खाने-पीने की चीज़े सामने पडी रहती हैं ’

सहेली अजनबी की तरह उसके चेहरे और सारे शरीर को गौर से देखती रही, ‘खैर, आप समझती हैं कि आसार अच्छे हैं तो देख लीजिए, लेकिन मेरा कहना मानिए । अपनी ही तरह का एक मनुष्य चुनिये और उसके गले मे वर-माला डालिए ·शेरो को दूर से या चित्रो मे देखना अच्छा लगता है, उन्हे पालतू बनाना सिर्फ पागलपना है ।’

‘वही सही ’ राजकुमारी ने गहरी साँस ली, ‘इस सबको आधे मे छोडना अब मेरे हाथ मे नही रहा । एक बार हम स्थिति को मानकर उसे जन्म दे देते हैं तो वह खुद-बखुद पौधे की तरह बढती है । उसका बढना हमारे चाहने पर नही रहता । हम उसे दूर से देखते भी नही रह सकते, उसके बढने मे औज़ार बन जाने की मजबूरी ही हमारे सामने रह जाती है । रोज़ सोते हुए सोचती हूँ कि कल से यह सब बन्द, न अपना समय रहा, न मनोरजन । सारे वक्त बस, वही तो दिमाग मे रहता है । लेकिन अगले दिन पता नही कौन है जो मुझे ठेलकर वही जा पहुँचाता है ।’

सहेली ने मुँह पर आधी बात रोक ली । बाहर का पशु नही, आप के भीतर का पशु है जो आपको मजबूर कर देता है, इसी पशु से दो-दो हाथ करने को बेचैन वही हो रहा है और उसे आप नाम देती हैं विवेक । राजकुमारी की मजबूरी को कही वह समझती भी तो थी । ऊँचे

पहाड को देखकर जैसे चोटी पर जा पहुँचने की, बड़े विशाल समुद्र को देखकर तैर जाने की जैसी दुर्निवार ललकार आदमी अपने भीतर महसूस करता है, वैसे ही किसी चुनौती के सामने बेचारी राजकुमारी मजबूर हो गई है। खतरे के पास खिचे चले जाना, उससे खेलना भी तो उतना ही स्वाभाविक है जितना उससे कतरा जाना, बच निकलना। बिना सीधा अनुभव किये आदमी अपना मन नही समझ पाता। दूसरे का अनुभव कहाँ-कब कुछ सिखा पाता है? एक आत्म-विश्वास है जो फिर-फिर उन्ही अनुभवो से गुजरने को ठेलता जाता है।

और राजकुमारी का वह पागल-परिचय चलता रहा। अब राजकुमारी को देखकर शेर के सारे चेहरे-मोहरे पर जो भाव आ जाता उसे वह पुलककर स्वागत मे मुसकुराने का नाम देती। एक दिन उसने डरते-डरते पिंजरे के सीखचो मे हाथ बढाया तो प्यार से शेर उसे चाटने की कोशिश करने लगा। अपने आप एक बार बढा हुआ हाथ पीछे आया फिर आगे गया। ओह, खुरदरी जीभ के स्पर्श ने उसके रोगटे खडे कर दिये सारा शरीर झनझना उठा। शेर उसका हाथ चाटता रहा और उसे विश्वास नही हो रहा था। आस-पास सब चकित। हाथ मे खरोचे आ गई थीं, लेकिन राजकुमारी सारे दिन अपनी विजय पर उमगती रही। रह-रहकर राजकुमारी अपने हाथ को देखती और उस रोमाच को याद करने की कोशिश करती। पागल बना देने वाले किसी स्पर्श का उसे ध्यान नही, लेकिन वह स्पर्श कुछ उसी तरह का नशीला था। रह-रह कर सारा शरीर फुरहरी से सिहर उठता। शेर का उठना बैठना, खाना, पीना अब उसे बहुत ही स्वाभाविक लग रहा था। शेर का अपना ढग-ढर्रा है, उसमे वह कर भी क्या सकती है?

और महीनो की जान-पहचान, परिचय-घनिष्ठता के बाद वह दिन आया, जब राजकुमारी निस्सकोच उसके पिंजरे मे चली गयी, उसने शेर की पीठ पर हाथ फेरा, कान पर थपथपाया, और अपने हाथो से कच्चा मांस खिलाया। न उसे घिन हुई, न कै करने की तबियत हुई

और न जल्दी से भागकर बाहर जाने की घबराहट...उसने अपने मन को समझा लिया था, शेर को अगर पालतू बनाना है तो उसे ही अपने को शेर की ज़रूरतो, आदतो के हिसाब से ढालना होगा। शेर के लिए तो इतना ही काफी है कि पिंजरे मे बद है और उसे फाड नही खाता

तब उसने शेर की ज़रूरतो को ध्यान मे रखकर एक कमरा बनवाया, विल्कुल अपने कमरे के पास, ताकि हमेशा उसके ही पास रह सके। उसकी ज़िन्दगी का एकमात्र उद्देश्य ही जैसे उसे पालतू बनाना रह गया था। जिस दिन वह खुले शेर को केवल एक जजीर के सहारे कमरे मे लायी, उस दिन सारे राज्य मे भयानक सनसनी थी। लाखो लोगो की भीड इकट्ठी हो गयी थी, विदेशी अफसर, राजदूत, सैलानी और दर्शक जमा थे और राजकुमारी विश्व-विजय के गर्व से शेर को अपने महलो मे ले जा रही थी। अब वह शेरवाली राजकुमारी थी। इतनी भीड और शोर शराबे से शेर भडक न जाये, यही उसे डर था और इसका उसने इन्तज़ाम कर लिया था। लेकिन उसे विश्वास यह भी था ऐसा कुछ नही होगा। उसे लगा, शेर भी उसके मन के विश्वास को समझता है। उसने एकाध बार गुस्से से भीड को देखा भी, लेकिन फिर जब सिहरनभरी राजकुमारी की तरफ मुँह घुमाया तो उसे लगा जैसे हँसकर विश्वास दिला रहा हो..

राजकुमारी ने कायाकल्प की बाते बहुत पढी थी, लेकिन इस बार कायाकल्प को उसने रोज़ अपने साथ घटित होते देखा था वह सचमुच जैसे बादलो पर चलने लगी थी। रोज हजारो लोग उससे मिलने आते, उससे एक के बाद दूसरा सवाल करते, 'ऐसे भयकर शेर को आपने कैसे पालतू बनाया ? आपको डर नही लगा ? घृणा नही हुई ? अब डर या कुछ गलत लगता है ?' राजकुमारी गर्व से मुसकुरा-मुसकुरा कर जवाब देती, 'धैर्य और लगन से सब कुछ हो सकता है। महीनो मैंने उसकी हर आदत, चाल, ढाल को ग़ौर से देखा है, अपना और उसका अध्ययन किया है, अपने को उसके लिए तैयार किया है और चाहे जितना

खूख्वार जानवर हो, आपकी आदतो या मन को न समझता हो, ऐसा बिल्कुल नही है। मैं जानती थी कि इसके लिये अपनी रुचि, सस्कार और अह, सभी को मुझे मारना होगा, अपने को उसके ही हिसाब से ढालना होगा ..लेकिन मैंने तय कर लिया था, मैं करूँगी '

'हाँ, हाँ, अपने को ढालते सभी है। लेकिन उस ढालने से इतना बडा काम कितने कर पाते हैं ? आपका ही यह कलेजा है, वर्ना कोई और तो शेर को देख कर ही बेहोश हो जाये ..आप धन्य है , लोग गद्‌गद् प्रशसा मे कहते। उन्हे जैसे अपनी आँखो पर विश्वास नही होता वे यही देखने के लिए विशेष रूप से खिडकी से घण्टो झाँका करते, कैसे खाता है, कैसे रहता है, कैसे सोता-जागता कब है ? लगता है, शेर सोचता भी है। राजकुमारी उसके इशारो और मन को कैसे पढ लेती है ?

राजकुमारी उत्साह से विभोर होकर सारे सवालो के जवाब देती। उसने ऐसा काम किया है, जो दुनिया मे हरेक के बस का नही है यह भावना उसे औरो से ऊपर उठा देती। उसे लगता कि वह धन-वैभव मे ही सबसे ऊची नही है, उनका उपयोग किसी बडी सफलता और यश के लिए कर सकने मे ही सबसे अनौखी है। उसकी ऊ चाई को कोई छू नही सकता...

धीरे धीरे शेर उसके महलो मे खुला घूमने लगा। राजकुमारी बैठी-बैठी मुग्ध और बेभान उसे देखती रहती...वह एक कमरे से दूसरे मे मोटे-तगडे बिलाव की तरह आता जाता और टहलता या सोता। हाँ, दूसरे नौकर-चाकरो को देखते ही उसकी भवे तन जाती, पूछ के बाल और कान खडे होने लगते। वे खुद डर के मारे उधर नही आते थे। एकाध बार उसने किसी को झपटकर घायल भी कर दिया। सबने मिलकर एक दिन अरदास की, 'राजकुमारी जी आप, जो कहेगी, हम जी-जान से करेगे। लेकिन अपनी जान तो सभी को प्यारी है। हमारे भी बाल बच्चे है। राजकुमारी समझदारी से मुसकुरायी, सभी का कलेजा तो उस जैसा नही है, वह तो कोई एक ही होता है राजकुमार भरत की

तरह ..उसने खुद ही शेर का सारा काम शुरू कर दिया। लेकिन एक सलाह लोगो के कहने से मान ली। हाथ-पाँव और शरीर पर वह मोटे-चमडे के पट्टे बाधे रहती—प्यार मे भी जब शेर मुह या पजा मारता, या हाथ या पिडली चाटता तो घाव हो जाते। पता नही, कब खून का स्वाद जाग उठे और वह हिंस्र हो उठे यह डर उसे भी था ही। हालाँकी अब उसका विश्वास और भी बढ गया कि वह शेर की खुशी-नाराज़ी, रूठने-लाड करने, सबको समझने लगी है—यही नही उन्हे ढग से सभाल भी सकती है। कब शेर सुस्त होता है, कब दार्शनिक बन जाता है। कब उसकी आँखो मे पुरानी याद जागने लगती है, कब बच्चो की तरह खिलाडी बन जाता है। उसका रूठना, प्रसन्न होना सभी उसे आश्चर्य और प्रसन्नता से भर-भर जाने लगे। सारे दिन उसके सोचने बोलने का विषय वही रहता। वह अक्सर ही कहती, अपने से अलग किसी दूसरे की आदतो और प्रकृति को जानना ठीक वैसा ही रोमाँचक अनुभव है जैसा किसी अजनबी और अनजान प्रदेश मे यात्रा करना। उसे खुद ही खोज निकालना और उसके एक-एक हिस्से से खुद और सीधा परिचय पाते जाना . किसी ने पहले इस प्रदेश की यात्रा नही की और आप ही वह पहले व्यक्ति है जो दुनियाभर की जोखिम उठाकर इस प्रदेश को कदम-कदम खोज रहे है, यह आपके लिए परम सतोष और गर्व की बात तो है ही लेकिन किसी अनजान देश को खोज निकालना वहाँ घूम आना एक बात है और अपने को उसके हिसाब से ढाल लेना दूसरी या कहूँ, बेहद ही मुश्किल काम है। मगर उस स्थान को कुछ पहाडो मैदानो और समुद्रो के बहाने खोजते ही नही जाते, पल-पल अपने को उसके हिसाब से ढालते भी जाते है। जानने के बाद भी तो चीजें वही नही रहती , मौसम बदलते है और वही चीजे नयी हो उठती हैं, नयी तरह का व्यवहार माँगने लगती है

"और यहाँ आकर वह भूल जाती कि वह शेर की बात कह रही है या किसी अनजान- अनखोजे प्रदेश की ..प्रदेश की बनावट को जानना और

अपने आप को बदलते मौसम के अनुसार तैयार करना ..

अब राजकुमारी बाकायदा शेर के ऊपर बैठकर खुली सडको और बगीचो मे निकलने लगी थी, जो भी देखता दग होकर दाँतो तले उँगली दबा लेता। सब वाह-वाह कर उठते, राजकुमारी ने सचमुच कमाल कर दिखलाया है! ऐसा भयानक और खूँखार शेर कैसा पालतू बिल्ली की तरह व्यवहार करने लगा है। यह केवल राजकुमारी की ही हिम्मत और लगन का काम है, हरेक के बस का नही है। एक तो वह राजकुमारी है, दूसरे उसे ज़रूर ही कोई देवी देवता सिद्ध है। कैसी दुर्गा की तरह निर्भय घूमती है। कुछ लोगो ने उसके बारह हाथो की अफवाह भी उडा दी कि उन्होने अपनी आँखो से देखे हैं। लोग रास्तो से भाग-भाग कर घरो मे घुस जाते और खिडकियो-छज्जो से घन्टो उधर देखते रहते जिधर वह गयी थी। सारी दुनिया से लोग केवल उस दृश्य को देखने चले आते । शका से कोई-कोई कहता, 'और तो सब ठीक है, लेकिन भाई, शेर तो शेर ही है। किसी दिन बिगडकर जगल की तरफ भाग निकला तो राजकुमारी की हड्डी-पसली का पता नही लगेगा। बहुत हुआ, शौक पूरा हो गया, राजकुमारी को अब यह सब बद कर देना चाहिए सारे शहर मे आतक छाया रहता है '

सुनकर वह लापरवाही से हँस देती—लोगो के लिए वह शेर होगा लेकिन उसके लिए तो पालतू कुत्ते से अधिक नही है। एक दिन अगर मै उसे दिखाई न दूँ तो भूखा मर जाये, किसी दूसरे की शक्ल नही देखे... हालाँकि भीतर-ही-भीतर आशका भी होती कि सचमुच ही शेर किसी दिन निरकुश हो उठा तो उसे सभाला कैसे जायेगा ? महलो मे तो कोई न कोई इन्तजाम हो भी सकता है, लेकिन खुले मे बाहर ? साथ ही यह भरोसा भी था कि उसे स्थिति का सामना करना आता है, अगर शेर ने गिरा नही दिया तो वह सभाल ले जायेगी। सहेली की बात याद करके हँसी भी आयी। निरकुश शेर पर बैठा आदमी न जीता है, न मरता

लोग जब अविश्वास और भय से आँखे फाडे शेर को देखते तो वह

उनकी तारीफो को अनसुना करके मन ही मन कहती, तुम्हे क्या पता, मैंने इसके लिए अपने को कितना मारा है ? कितनी साधना की है मैंने इसके लिए ? तपस्या कोई होती हो तो शायद यही है । तपस्या से मैंने शेर को नही पाला, अपने भीतर और बाहर के पशुत्व पर विजय पायी है अब अगर तुम मुझे या मैं ही अपने को देवी समझलूँ तो बहुत गलत तो नही है

सचमुच ही राजकुमारी ने साधना की थी। उसका खाना-सोना, उठना-बैठना ही शेर की जरूरतो के आस-पास नही हो गया था, बल्कि पूरा महल उसी के हिसाब से ढल गया था । अब न वहाँ रगीन पर्दे थे, न कीमती गलीचे...झाड फानूस, फूल-पौधो सब पर धूल जम गयी थी—सब अनदेखा और मुरझाया हो उठा था। न तो कोई उस सबकी देख-भाल कर पाता था और न ही उसे उधर ध्यान देने की फुरसत थी—सारे दिन पट्टो मे जकडी जब वह थक कर लेटती तो जोड जोड दुखने लगता था । लेकिन यही सन्तोष उसके भीतर नया जोश और उत्साह भर देता कि उसने शेर को अपना गुलाम बना लिया था

काफी दिन बीत गये। राजकुमारी की कीर्ति चारो ओर छा गयी लोग सिहवाहिनी के प्रति आदर करते, उसमे श्रद्धा रखते, लेकिन भय और विस्मय धीरे धीरे कम होते गये थे

एक दिन सहेली बोली, 'राजकुमारी, आपको भले ही सन्तोष हो कि आपने उसे अपना गुलाम बना लिता है, लेकिन सोच कर देखिये, आप उसकी गुलाम है या वह आपका ?'

राजकुमारी उपेक्षा से हँस दी, 'शब्दो का फेर है, क्या फर्क पडता है ? कोई किसी का गुलाम सही एक शेर है जो मेरे इशारो पर चलता है, यही क्या कम है ? इसके लिए जो भी थोडी-बहुत असुविधाएँ हैं वे मैंने अपनी ही मर्जी से स्वीकार कर ली है .'

'मर्जी नही, मजबूरी कहिए राजकुमारी . 'लेकिन बात बदलकर सहेली अपनी ही कहती रही, 'यह बहुत चलेगा नही, क्योकि स्वाभाविक

नही है। आप सारे दिन चमडे के पट्टो मे जकडी रहती है, उसके लिए गोश्त और खाने का इन्तजाम करती है, उसकी गर्मी-सर्दी ही आप का कारण है। आपको हमेशा उससे मन के मुताबिक व्यवहार करना पडता है'

'क्योकि वह मुझ पर आश्रित है फिर शेर है तो उसकी जरूरते उसी के हिसाब से पूरी करनी पडती है। ध्यान और समय देने ही पडते हैं। जितना हो सकता था, उसे मैंने बदल दिया है, लेकिन तुम सोचो, उसे कुत्ता तो नही बनाया जा सकता।' लाचार स्वर मे राजकुमारी ने जवाब दिया।

'उसे कुत्ता नही बनाया जा सकता, लेकिन अपने को तो आदमी बनाये रक्खा जा सकता है। मुझे तो ऐसा लगता है जैसे आपने उसे छोटे पिंजरे से निकाल कर अपने को उसके साथ बडे पिंजरे मे कैद कर लिया है। महल जरूर वही है, लेकिन किसी पिंजरे से बहतर कैसे है? न आप कही-आ-जा पाती है, न आपके पास कोई आता-जाता है। चारो तरफ धूल और जाले लगे है। जो भी आता है, वह आपसे नही, एक अजूबा दृश्य देखने आता है आप इस सबमे कहाँ है?'

लगा, कही सहेली ठीक ही कह रही है। उसकी अपनी ज़िंदगी और अपना होना है ही कहाँ अब? अपने ही बनाये दृश्य ने बढकर उसे ढाँप लिया है। कहाँ कोई अब उससे मिलने आता है? उसकी सारी दिन-चर्या क्या इस जानवर के ही आस-पास नही सिमट गयी है? मानो सारी उम्र का सफर तय करके यही पहुँचना हो। उसकी सारी शिक्षा-दीक्षा, सुन्दरता और कोमलता सूख-सूख कर मुरझा गयी है और ज़िंदगी के सबसे अच्छे दिन एक झूठे पागल शौक के पीछे घुले चले जा रहे है जानती तो वह भी इस बात को अच्छी तरह ही है कि यह सब स्वाभाविक नही है और अब तो इसमे भी किसी के लिए न कोई आकर्षण रह गया है न नयापन। सब इसे स्वाभाविक ही मानने लगे हैं। खुद उसके लिए भी तो अब इस अनदेखे-अनखोजे, प्रदेश मे ऐसा कोई हिस्सा नही बचा जो विशेष रोमाचक और उत्तेजक हो अगर सारी बात को इसी बिन्दु पर

आना था तो वह एक कुत्ता ही पाल लेती, कम से कम ऐसे अस्वाभाविक तनाव से भरे दिन तो न गुजरते . शेर तो उसकी जिन्दगी का पल-पल मागता है, और बदले मे औरो को देखकर, दुनिया की सुनकर वही खुद अपने मन मे अद्भुत और विलक्षण होने का गर्व सन्तोष खोज लेती है, शेर तो उसे कुछ भी नही देता

औरे जिस तेजी से नशा चढा था उसी तेजी से उतरने लगा । अरे, उसने कहाँ की बला अपने सिर डाल ली ? सखी-सहेलियो के बीच उसे हँसे-खेले बरसो हो गये, कही घूमने जाना, खिलखिलाकर हँसना और मन बहलाना अब किसी और जनम की बाते लगती हैं । सजने-सँवरने की बात छोड भी दो तो शायद अपना चेहरा शीशे मे देखे उसे महीनो हो गये . अच्छे कपडे नही पहने फूलो के बीच खुल कर साँस नही ली । वही शरीर पर खरोच, घाव, घोडो की जीन की तरह चढे हुए पट्टे । शीशा देखा तो धक् से रह गयी जानवर को पालने के नशे मे मैंने खुद अपने को जानवर बना लिया है शेर के चेहरे पर भले ही मासूमियत और भोलापन लगता हो, खुद उसके चेहरे पर अजीब वहशी सख्ती आ गयी है . साथ के असर ने क्या उसे यहाँ ला-पटका है ? शरीर और महलो से अब इत्र चन्दन की खुशबुओ के भभके नही, गोश्त और लीद की सडाध ही आती है । न वह किसी के पास जाती है और न उससे कोई मिलने आता है । शायद सब बचने लगे हैं । लोगो ने उसे आदमी मानना ही छोड दिया है—सब एक दूरी और डर बीच मे रख कर उस पार से मिलते हैं...सहेली को अगर इस बडे पिंजरे मे दो जानवर बद दीखते है तो बुराई कहाँ है ?

वह बहुत उदास और सुस्त रहने लगी । उसने शेर की पहरेदारी-टहल कम कर दी और मन से चाहने लगी कि किसी दिन वह भाग ही जाय । लेकिन शेर नही भागा । लगता, जैसे शेर भी उसकी उदासी समझने लगा था और दूर करने के लिए परेशान होता था .उसे शेर की

खुशामद भरी मजबूरी पर दया भी आती .

फिर एक दिन झुँझलाकर उसने अपने सारे पट्टे उतार फेंके, अपने को कमरे मे बन्द कर लिया। वह पहले की तरह खूब उबटन-मलाई लगा-लगाकर नहायी आर बाहर घूमने निकल गयी। उसे खुद ऐसा लग रहा था जैसे पता नही कब से किसी शिकजे मे कसी थी, तहखाने मे कैद थी और पहली बार खुले आसमान और फैली धरती को देख रही थी। बनवास से लौटे व्यक्ति की तरह वह अब अपनी दुनिया मे वापस आ गयी है। और उसने तय किया कि अपने को एक ही जगह कैद कर लेना गलत हे। शेर अपनी जगह है, रहे। लेकिन वह अब अपनी दुनिया मे भी आया करेगी।

लेकिन लौट कर पाया कि शेर बिगड गया है। उसने खाना-पीना कुछ भी नही लिया है यही नही, उसने एक रखवाले को भी जान से मार डाला है। उसने खुद जाकर शेर को खिलाया-पिलाया तब कही काफी नाराज़ी के बाद वह शान्त हुआ और राजकुमारी अपने को अपराधी सा महसूस करती रही। साथ ही उसे चिन्ता भी लग गयी। वह शेर के बिना ज़िदा नही रह सकती और शेर उसे वापस आसानी से अपनी ज़िदगी मे लौटने नही देगा। उसकी अपनी ज़िदगी मे शेर आयेगा नही, आयेगा भी तो उसे स्वाभाविक और सहज नही रहने देगा। उसके साथ लोग उसे नही, शेर को और शेर के उसके साथ होने को ही देखते है। फिर उसे भी तो यह गवारा नही था कि वह अब बिना शेर के पहले जैसी "साधारण और सब जैसी" राजकुमारी ही रह जाये। लेकिन उसके साथ केवल उसका गुलाम बन कर ही रहा जा सकता था। उसकी आदते और अदाएँ अब उसे नखरे लगने लगती थी, जिन्हे बर्दाश्त करना अब पहले की तरह खुशी नही देता था। मगर इन सबसे भी बडी बात यह कि उसे शेर के साथ रहने की, उसके नखरे सहने की, आदत पड गयी थी और दूसरो की आदतो, नाजो पर नाचती, अपनी ज़िदगी झुठलाती इस गुलाम-राजकुमारी से उसे घृणा थी।

फिर एक दिन जब शेर ने उसके बाहर जाने पर एक और पहरेदार को घायल कर दिया तो वह गुस्से से आग हो गयी, उसने कोडा लेकर उसे खूब मारा, खूब मारा शिकारियो को बुलाकर उसके दाँत निकलवा दिये, पजे के नाखून कतरवा दिये और अकेली कोठरी मे भूखा-प्यासा बद कर दिया। शेर घायल सा दहाडता और चिघाडता रहा और राज-कुमारी बिना कुछ खाये-पीये रोती रही पहरेदार को घायल कर डालने वाला शेर कैसे निरीह बच्चे की तरह उसके कोडे खा रहा था, बच रहा था और बार-बार मुँह बचा कर रिरिया रहा था चाहता तो वह क्या न कर सकता था ? इसलिये इस सबके बीच भी उसने तय कर लिया कि अब यह सब नही चलेगा और वह इस तरह शेर की गुलाम नही रहेगी अब तो उसे नही, शेर को ही उसकी जिंदगी या सुविधाओ के हिसाब से बदलना होगा। कहाँ तक सिर्फ वही वह बदलती चली जाय। शेर के लिए बकरे और भैसे मारे जाये और बुरी तरह मुह ओर पजो को खून से लथेडता हुआ वह भचर-भचर खाता जाय, यह सब देखना भी अब राजकुमारी के लिए मुश्किल हो गया था। उसने देखा, दाँत न रहने से अब वह और भी गन्दगी करने लगा है, फिर भी भूखा असतुष्ट और भिखारी-सा ही दिखायी देता है राजकुमारी ने धीरे-धीरे उसका खाना ही बदल दिया. वह गुर्राता या गुस्सा दिखाता तो बेदर्दी से उस पर कोडे बरसते उसका दहाडना या गुर्राना सुनकर राजकुमारी कानो मे उँगली दे लेती और नीद न आने से सारे दिन बेतरह झल्लायी रहती .

लोगो ने भी अब उससे डरना बद कर दिया था, कोई भी उसे छूता कोचता और उसके कानो या पूछ से खेलता वह सारे दिन इस तरह बीमार और सुस्त पडा रहता जैसे कोई खजेला कुत्ता कम्बल जैसी शेर की खाल ओढे पडा हो। न उसमे वह चुस्ती रह गयी थी न फुरती बरगद की गली जडो जैसी सलवटे अब गिजगिजाहट ही पैदा करती महल के कुत्ते उसे डराकर कोने मे भेज देते . बिल्ली तक गुर्रा कर सहमा देती। सारे दिन मुह और आखो से पानी बहता रहता, मक्खियाँ

भिनभिनाती मरी छछूदर जैसी पूछ एक तरफ पडी रहती, गाल लटक आये थे और कानो मे कलीले होने लगे थे ।

पता नही कैसी कैसी निगाहो से असहाय बच्चे की तरह याचना से जब वह राजकुमारी के मुँह की तरफ देखता तो उसका दिल भर आता, आँखो मे आँसू आ जाते । जगल के राजा की यह हालत देखी नही जाती थी । लेकिन वह पाती थी कि उसे शेर से प्यार कभी भी नही रहा, पहले चकित-विस्मय था जो उसके अपने भीतर था और आस-पास चारो तरफ था, खतरे से जूझने का हिंस्र निश्चय था और आज केवल दया है । अपराध-बोध भी होता कि अपनी जरा-सी सनक मे आकर उसने अच्छे भले शेर की क्या हालत कर डाली है । मगर अब तो ऐसे शेर का अपने साथ जोडे जाना भी उसे शर्मिन्दा ही करता है, तब अफीमची की तरह पडे ढीले-ढाले जानवर पर झूँझल ही आती आखिर ऐसी भी क्या लाचारी है, है तो शेर ही । कोई बात है कि शेर या तो शेर रहेगा या चूहे से भी बदतर हो जायेगा इसे साधारण प्राणी बनना ही होगा। अब उसके ऊपर दूसरा पागलपन सवार हो गया कि वह शेर को सुधार कर ही मानेगी

आखिर एक दिन राजकुमारी ने शेर को गोली मार दी

शेर उसकी जिन्दगी के हिसाब से ढलने और सुधरने के बजाय यों भी तो धीरे-धीरे मर ही रहा था । उसे जगल मे छुडवाती तो भूखा-प्यासा वह गिद्ध-सियारो का भोजन बन जाता, या फिर तिल-तिलकर महलो मे ही मरता —बात एक ही थी । बहरहाल उसे मरना ही था । उसे जल्दी-जल्दी यह कष्टभरा रास्ता तय कराके ठिकाने पहुँचा देना अपने भीतर उठती दया की एकमात्र माग थी । फिर सडक के कुत्ते से भी बदतर शेर की स्वामिनी होने की बदनामी अब उसके बर्दाश्त के बाहर थी । उसने तो ऐसा ही शेर चाहा था जिससे सब लोग डरें, वह खुद भी डरती रह सके जिसकी वह खुद गुलाम हो सके...इस मरे चूहे का उसे क्या करना था ’

उस दिन उसने सहेली को बुलाकर इतने दिनो से मन मे उठती बात कह डाली, 'तूने सच कहा था। शेर पर सवार आदमी से अधिक मजबूर कोई दूसरा नही होता। न वह जीता है, न मरता। इस शेर को देखने से पहले ही जब किसी ऐसे शेर को पालने की बात मेरे दिमाग मे आयी थी, सच पूछो तो मैं तभी उस पर सवार हो गई थी और वही मुझे भटका रहा था।'

'लेकिन राजकुमारी अच्छे भले शेर को यो अपनी एक पागल इच्छा का शिकार बनाकर आखिर आपको मिला क्या ?' सहेली करुण हो आयी।

राजकुमारी के पास इसका कोई जवाब नही था। वह उदास हो गयी। गहरी सास लेकर बोली, 'कुछ भी नही। यही समझ ले कि दो जानवरो की लडाई थी और दोनो इस तरह गुथ गये थे कि एक न एक को तो मरना ही था। इस फैसले के बिना कोई छुटकारा नही था। कैसे कहूँ, कि इसमे मेरी या उसकी ही गलती थी। शायद दोनो अपनी-अपनी जगह सही थे और यह सही होना हम लोगो की लाचारी थी। यही समझ ले कि मैंने उस जानवर को मार जरूर दिया है, लेकिन अब खुद भी किस लायक रह गयी हूं ' और अपने जीवन के बेश-कीमती सालो के यो बर-बाद होने और एक स्वतन्त्र जिन्दगी को कुचल देने का बोझ उसकी आत्मा को सालने लगा। वह पागलो की तरह महीनो रोती-बिलखती रही—जैसा भी था अपनी तरह का अकेला था...अब समझ मे ही नही आता था कि अपना और अपने समय का क्या करे ? खाली होना बहुत ही, बेमानी और अकेला हो गया था. ?

आज भी वह शेर राजकुमारी के सबसे खूबसूरत कमरे के बीचो-बीच खडा है। देश के सबसे कुशल कारीगरो से उसमे भुस भरवाकर उसे बनवाया है, आखो के लिए खास तरह का काच डाला गया है। अपने खुले दिनो की तरह तगडा, फुर्तीला और खूखार दिखायी देता है। उसे कुछ इस तरह ऊँचे पर बैठाया गया है, जैसे अभी छलाग लगाकर

झपट पडेगा...उसके आस-पास कीमती पर्दे, गलीचे गुलदान, झाड-फानूस लगे है और सारा महल खुशबुओ और चहल-पहलो से गूँजता रहता है।

देखने के लिए देश-विदेश से लोग आते रहते हैं। पहली बार तो उसके दाँत-आँखें, भारी शरीर को देखकर भय का रोमाच तन-मन को सिहरा देता है और विश्वास दिलाना मुश्किल हो जाता है कि शेर अब जीवित नही है। छूते और पास आते हुए उसी तरह डर लगता है। राजकुमारी आसू-भरी आखो से उसे देखती है, प्यार से उसके सिर-पुट्ठो पर हाथ फेरती है और भरे-गले से उसकी एक-एक आदत, अभ्यास और हरकत या अपने ऊपर उसके निर्भर होने की बात विस्तार से बताती है पता नही, उसमे शेर की याद होती है या अपनी विजय की याद या केवल पश्चाताप। बहरहाल, यही राजकुमारी का रोज़ का काम हो गया है .

और अब वह दर्शको, अतिथियो से छुट्टी पाकर इतमीनान से अपनी ज़िन्दगी मे लौट आती है

# ढोल

किसी शहर मे एक क्लर्क रहता था। वह बहुत ही कमजोर, सूखा और दुबला-पतला था। सब तरह से वह कोशिश करके हार गया, लेकिन उसका स्वास्थ्य वैसा ही रहा। शहर मे काफी भीड-भाड, धक्का-मुक्की थी, इसलिए और भी दुखी था। फाइलो कागज़ो, या दूसरे कामो मे लगे रहने के कारण उसे समय नही मिलता था। भीड मे किसी की कुहनी की चोट, किसी का धक्का उसे कई दिनो तक दर्द करता रहता था। उस समय तो केवल चोट लगती, आँखो के आगे अधेरा छा जाता और वह लडखडाकर पीछे हट जाता। अकसर सपने देखता—एक दिन किसी दैवी शक्ति से ऐसा शक्तिशाली हो जायेगा कि इन सबको मज़ा चखा देगा। उसे विश्वास था कि एक-न-एक दिन ऐसा होगा ज़रूर। फिलहाल तो उसे हमेशा डर बना रहता कि कभी कोई उसे पीट-पटक देगा, उससे चीज़ें छीन लेगा, या उसे धक्का देकर गिरा जायेगा। इस-लिए वह हमेशा सिर झुकाकर काम करने का भाव दिखाये रहता और जहा भी दो चार आदमी दीखते वहाँ से कतरा जाता। जहाँ तक बन पडता, दफ्तर या घर ही रहता और किसी चमत्कार की राह मे, तरह-तरह की कल्पनाएं किया करता। मगर यह आशका उसे हमेशा बनी

की तरह खाती रहती कि कभी कोई दुर्घटना हो सकती है। शाति उसे अपने कमरे मे भी नही मिलती थी। ऊब, डर, आशका उसे चैन से नहीं बैठने देते। कोई चोर-डाकू ही आ जाये, तो ? जिस तरह हर राह चलता आदमी उसे अपनी तरफ ही आता लगता, उसी तरह रात-रात भर उसे चोर डाकुओ की चिंता सताती। जरा-से खटके से कप-कपी चढ जाती। शरीर पसीने-पसीने हो जाता। यहाँ से भागकर किसी और शहर मे चला जाये, तो ?—वह सोचता। लेकिन वहाँ भी तो यही सब लोग होगे, यही सारी चिन्ताए होगी। एक दिन चुपचाप कही भागना है, वह सोचता रहता और दुबला होता जाता।

अब भगवान की लीला देखिए कि एक दिन उसने कवच पहने हुए किसी पुराने योद्धा का चित्र देखा और उसे देखता रह गया। खयाल आया कि अगर ऐसा ही कवच वह भी पहन ले, तो समस्या हल हो सकती है। आखिर बहुत माथा-पच्ची करने के बाद उसने एक तरकीब खोज निकाली। वह बाजार से अपने शरीर के नाप का एक ढोल खरीद लाया और घर के दरवाजे बद करके ठोक-पीटकर उसे अपने शरीर के हिसाब से तैयार करने लगा। अपनी समझ से काम पूरा होने पर उसने शरीर पर ढोल चढा कर ऊपर से ढीला-ढाला कुरता पहना। शीशे के सामने गया, तो अपने को देखकर हँसी आ गई। सूरत-शक्ल जरूर बेडौल लगती है, लेकिन दूसरे लोग धक्का-मुक्की कर के उसे परेशान नही कर पायेगे। जल्दी ही उसके भीतर के कसे अग दुखने लगे, तो उसने ढोल उतार कर अलग रख दिया। बहुत बडा बोझ उतर गया। अपने आप को समझाने लगा कि जल्दी ही आदत पड जायेगी, तो इतना बुरा नही लगेगा। पहले घर के भीतर ही इसे पहनने का अभ्यास करना होगा।

अभ्यास चाहे जितना हो जाये, लेकिन इतना वह भी जानता था कि इसे पहनकर बाहर निकलने की हिम्मत नही होगी। कम-से-कम इस शहर मे वह कभी भी ऐसा नही कर पायेगा। उसने जैसे-तैसे करके अपना तबादला और भी बडे शहर मे करा लिया।

बडे शहर मे वह पहले ही दिन भीतर ढोल और उसके ऊपर ढीला-ढाला चोगा पहनकर निकला, तो बेहद घबराया हुआ और चौकन्ना था। हमेशा लगता रहा, जैसे सब लोग उसे ही घूर रहे है। शायद सब ताड गये है कि वह उसके शरीर का स्वाभाविक रूप नही है और उसने कपडो के भीतर एक ढोल पहन रखा है। इसका मतलब है कि सभी उसके मन की कमज़ोरी भी जान गये है। यह बात उसे परेशान और दुखी करती थी। वैसे लोग, पता नही, उसकी तरफ ध्यान देते या नही, लेकिन अपनी इस हरकत से उसने अपनी इस कुंठा को और भी उजागर कर दिया है—कही उसने गलती तो नही कर डाली ? पहले उसे सिर्फ अपनी चिन्ता थी। अब शरीर, ढोल और मन, तीनो की चिन्ता सताने लगी।

जगह नयी थी, इसलिए उसकी तरफ बहुत कम लोगो ने ध्यान दिया था। चलो, यह भी अच्छा है। पुराने शहर मे होता, तो सब-के-सब खाल खीचकर रख देते।

फिर भी कुछ अजीब तो लगा ही, कई लोग उस की यह हुलिया देखकर हसे कुछ ने सजीदा होकर पूछा कि खैरियत तो है, नयी जगह की आबोहवा माफिक आ रही है, या नही ? उसके मुँह से अनायास निकला कि रीढ की हड्डी मे तकलीफ है, इसलिए डॉक्टर ने पहनने को कुछ दे दिया है, तभी उसे एहसास हुआ कि पिछले शहर मे झुके-झुके काम करने से उसकी रीढ मे दर्द रहा करता था। कम-से-कम इस समय उसे निश्चय ही लगा कि दर्द रहता था। सामने वाले चेहरो पर हमदर्दी और विश्वास देखकर उसे अपने भीतर एक बडी ही दुष्ट प्रसन्नता हुई, अरे वह इतनी आसानी से लोगो को बेवकूफ बना सकता है ! बात को ढग और तर्क से, व्यक्तिगत विश्वास के साथ कहा जाये, तो कैसी सहजता से सबके गले उतर जाती है, यह बहाना उसे कुछ दिन चल सकने वाला और अच्छा लगा। हो सकता है, थोडे दिनो मे सबको उसे इस रूप मे देखने की आदत पड जाये। ढोल को पहनने का उसने कैसा सटीक कारण

दिया है, इससे उसे अपनी बुद्धि पर विश्वास जागा ।

एकाधबार भीड मे उसे किसी ने धक्का दिया, तो देखा कि खुद ही अपनी चोट सहलाता हुआ पीछे हट गया, इसीलिए तो मैने यह तरकीब की है, बच्चू ! उसने मन मे खुश हो कर सोचा आठ-दस बार लोग ऐसी करेंग, फि र खुद ही बचने लगेंगे ।

लेकिन अभी आदत नही पडी थी और उसे लगता रहता था कि जल्दी-से-दल्दी घर पहुँचे, दरवाजे बद कर के ढोल उतारे और शरीर को ढीला छोड कर चैन की सास-ले। सारा शरीर एक ही हालत मे रहने से बुरी तरह अकड जाता है। उतरे हुऐ ढोल को वह बडी मुग्ध आँखो से देखता, कल्पना करता, कि वह अभी भी उसमे है और अलग खडा होकर अपने आपको देख भी रहा है कि कैसा लगता है। इस तरह हर दिन को वह पूरे विस्तार के साथ आखो के आगे ला कर फिर से पीता, खुद बडा गहरा सतोष होता, हसी आती और अपना ही नाम ले कर ढोल को बुलाता—कहो मिस्टर कैसे हो ? आज तो बडे अच्छे कपडे पहनकर घूमे ! तुम्हे देख कर एक बार तो बॉस भी सकपका जाता है !' और फिर खुद ही लोट-पोट हो जाता ढीला-ढीला चोगा उसके भीतर भारी-भरकम 'शरीर'—वह एक किसी रोमन राजनीतिज्ञ की तरह लगता है! कुछ कहो, अब उसका एक भारी-सा व्यक्तित्व बन गया है ।

डॉक्टर वाले बहाने का असर कम हो गया है, उसे धीरे-धीरे इस बात का एहसास होने लगा, क्योकि लोगो के चेहरे की हमदर्दी की जगह एक विचित्र सा व्यग्य लेने लगा था । कही इसका कारण यह तो नही है कि मैं बहुत आत्म-सतुष्ट दिखायी देता हूँ ? इस आत्म-सतोष की भी वजह है । जहाँ आस-पास वाले हमदर्दी दिखाते है, पीठ पीछे हँसते हैं, या उसे दिलासा देते हैं कि जल्दी ही उसकी तकलीफ दूर हो जायेगी, वही भीड-भाड मे या दूसरी जगहो पर लोग उसे गौर से देखते है, उनकी आँखो मे आश्चर्य और भय हाता है । उनसे उसका कोई वास्ता नही

होता, लेकिन सहम कर उसके लिए जगह छोड देते हैं। या तो इज्जत के कारण या, या अपने चोट न लग जाये, इसलिए बचते है। उसने पाया कि उसमे एक अद्भुत शक्ति पैदा हो गयी है। यह शक्ति उसमे निरतर विकसित भी हो रही है, इस अनुभूति से बडा सुखद मजा आने लगा था। कौन देख रहा है और उसकी निगाहो मे कौन-सा भाव है, इस बात को वह बिना हिले-डुले कैसे सटीक ढग से पढ लेता है।

दफ्तर के कुछ लोग बेतकल्लुफ होने के जोश मे उसके कधे पर हाथ मार कर कोई मजाक की बात कहने की कोशिश मे खुद अपने को चोट लगा बैठे थे। ऐसे समय हमदर्दी का भाव खुद उसके चेहरे पर होता, पर मन ही मन कहता, साले बडे बेतकल्लुफ होने चले थे, आया मजा ! आगे हिम्मत नही होगी। ऐसे मौके पर उसके भीतर हँसी का सैलाब उमडने लगता कि किसी दोस्त का हाथ कुछ सोच कर ऊपर उठा-का-उठा ही रह गया है। ऊपर से वह बहुत सजीदा और गम्भीर बना रहता। इतना ही नही, उसके चेहरे-मोहरे और इस ढब ने उसे सबकी निगाहो का केंद्र बना दिया है, यह भी वह जानता था, लोग उसकी तरफ आपस मे इशारे करते है, यही बात उसे बेइन्तहा सतोष देती थी कि कैसा भी जमाव हो, उनके मन मे कैसी भी भावना हो, ध्यान सबका उधर जाये बिना नही रहता। सबसे अलग और कुछ विशिष्ट होना, सबके मन मे भय, आश्चर्य और कुतुहल पैदा करना, खुद ढोल के भीतर सुरक्षित रहना, अपने इस रहस्य से सतोष और गर्व पाते रहना, इस एक ही तरकीब से कितने सारे काम एक साथ हो गये हैं। अपनी सफलता पर वह खुद ही अपनी पीठ ठोकता। देखने मे भद्दा कुछ जरूर लगता है, भीतर शरीर भी दुखने लगता है, चलने-फिरने मे अपने आप को और ढोल को एक साथ सभाले रखना कोई आसान नही है, पर इसने सोचा, इसकी भी आदत पड जायेगी, और उसने फैसला कर लिया कि ढोल जिंदगी भर उसके साथ रहेगा। इसलिए ढोल चाहे उसे अपने हिसाब से ढाले या नही, वह खुद चलने-फिरने, उठने-बैठने, सबमे अपने को ढोल

के हिसाब से ढालेगा।

ऊपर से सब कुछ बडा गभीर, गमगीन और स्थिर-सा था, लेकिन हर क्षण भीतर लगता कि जिंदगी बेहद दिलचस्प, सनसनाहट भरी नाटकीयता से गुज़र रही है। उसे अपने और अपनी जिंदगी को लेकर कभी भी इतना मजा नही आया। वह अब एक बडा-सा आदमकद शीशा ले आया था और रोज नियम से उसके सामने खडा हो कर हसने मुसकराने, उठने-बैठने का अभ्यास करने लगा था। जानता था कि अभी उसकी चाल-ढाल, हाव-भाव बहुत सहज नही हैं। पहली बार शीशे के सामने यह देखकर उसके मन मे धक्का लगा कि मुसकराने, उठने-बैठने या चलने मे उसे चेहरे और आँखो का भाव अजीब दर्दीला-सा हो उठता है। किसी दूसरे के ऐसे भाव को देख कर यह जरूर सोचता कि दर्द की ऐंठन की वजह से इस आदमी के चेहरे पर ऐसी तकलीफ उभर आती है। लोग भी क्या उसके हाव-भाव मे ऐसी ही कुछ यातना देखते है? यानी जिसे वह सम्मान और भय समझता रहा है, वह केवल दया और हमदर्दी से आगे नही है। यह बात पिछले कुछ दिनो से उसे लगातार कोचने लगी थी कि उसके हाव-भाव स्वाभाविक नही है। कभी-कभी झुँझलाहट भी होती कि क्यो नही इस झझट को उतार फेकता और पहले की तरह ही मुक्त और खुला हो जाता है। हो सकता है, उसका भ्रम ही हो और लोग पहले उसे दया और उपेक्षा से न देखते रहे हो। और मान भी लो कि ऐसा था, तो फिर इस और उस स्थिति मे फर्क ही क्या रहा? उनसे मुक्त होने के लिए ही तो उसने यह बाना धारण किया है। अब तो जैसे भी हो, इसी स्थिति मे से कोई हल निकालना होगा। इसे छोड कर पुरानी हालत मे लौट जाना आसान कतई नही है। बिना ढोल के अपने को देखने की कल्पना ही बडी अजीब-सी लगती है। ढोल उतार देने पर लोग भी शायद अब न पहचान पाये। तो क्या अब ज़िंदगी भर यो ही इस बोझ से दबे गम्भीर और गमगीन रहना होगा? उसने फौरन ही अपने को सुधारा, यह फैसला तो उसने खुद ही लिया

था कि ज़िदगी-भर इसे अपने साथ रखेगा। और झमेला लगे, या झंझट जैसे भी हो, इसे निभाने के सिवा अब कोई रास्ता नही है। अब क्या कभी भी उसे सीधा और आत्मीय स्पर्श नही मिलेगा ? हमेशा ही, अपने हर निकटतम से ढोल की दूरी से, ढोल के भीतर रह कर ही मिलना होगा ? अपने आपको उसने यह कैसा देश-निकाला दे दिया है ? क्या अब यो ही अकेले, अनजाने और अनदेखे ही मरना होगा ?

उसे यह विश्वास हो गया कि लोग या तो उसे दया से देखते है या भय से। उनके व्यवहार से लगता है, जैसे उसे छूत की कोई बीमारी है—वे सावधानी और दूरी बरतते हैं। यह दया भय पहले उसे अच्छे लगते थे, अपने बचाव और अह को सतोष मिलता था, लेकिन अब उसे धीरे-धीरे यही लगने लगा, जैसे यह उसे अछूत बनाये रखने की चालाक साजिश है। वह आता है, तो लोग बाते करते-करते चुप हो जाते हैं। जहाँ वह होता है, लोग खुल कर व्यवहार नही कर पाते। कुछ ऐसा तनाव बना रहता है, जैसे एक घनिष्ट परिवार के बीच कोई घुस पैठिया आ गया हो। और सभी राह देख रहे हो कि कब वह जाये और वे आराम-इतमिनान से बाते करे। जरूर ये सब उसके, पीछे, उसी की बाते करते होगे। उसके चेहरे-मोहरे और हाव-भाव का मज़ाक उडाते होगे। उसने कई बार एक-एक को विश्वास मे लेकर असलियत जानने की कोशिश की, उन्हे दावतें दी और अपना दुख रोया कि लोग किसी की तकलीफ के बारे मे कैसे क्रूर हैं। लेकिन इसके सिवा कुछ भी पता नही चला कि औरो के मन मे उसके लिए या तो सिर्फ उदासीनता है, या दया और भय।

जो चीज उसे भीतर तक तिलमिला गयी, वह यह नयी स्थिति कि लोग उदासीन हैं। वे दया करे, भय करे, घृणा करे। कुछ करे, लेकिन उदासीन होने से कैसे बर्दाश्त होगा ? नही, नही, उददसीन कैसे रहेगें ? उनके बीच मे ऐसा अजूबा घूमता रहे और उनका ध्यान न जाये,

ऐसा कैसे हो सकता है ? अब वह अपने और दूसरो से बहस करके यह साबित करने मे लग गया कि यह न दया है, न भय, इतनी खूबसूरती से बचाव की यह तरकीब निकालने, विशिष्ट बन जाने की अकलमदी और कौशल की इज्जत है । जिसे वह दूरी समझना है, वह उसका लिहाज और खास खयाल है । लोग उसकी बुद्धिमानी और पराक्रम के कारण उसे विशेष और ऊँचा मानते है । अपनी रक्षा और दूसरो पर असर डालने के लिए जो काम वे लाख सिर पटकने पर नही कर पाये, उसे उसने कैसी खूबसूरती से किगा है । यही देखकर लोग दग हैं और मन-ही मन उसे 'हीरो' मानते है ।

औरो और अपने को तरह-तरह से यह सब समझाते हुए यह भीतर अपनी तारीफ भी करता था—कैसी अच्छी तरह वह अपनी बात समझाने लगा है कैसी लाजवाब दलीले उसने सोच निकाली है । उसे यह विश्वास भी होने लगा कि उसका दिमाग खुल जाने का कारण यह ढोल ही है । अगर वह इसे उतार दे, तो पहले की तरह साधारण और सामान्य आदमी बन जायेगा । उसने और भी गहरा विश्लेषण करके पाया कि पहले वह अपने भीतर से सारी दुनिया को देखता था और बाकी सब उसे अजनबी और अपरिचित लगते थे—वह खुद अपने लिए 'बेचारा' था । आज वह अपने भीतर से उठकर उनमे घुस गया है और उनकी निगाहो से अपने को देखने लगा है । इसलिए उन्हे वह अजनबी और दूसरे नक्षत्र का प्राणी लगता है । यह हरेक के भीतर उतर कर अपने आपको देखने की क्षमता आखिर उसे ढोल ने ही तो दी है । पहले तो वह जान ही नही पाता था । कि लोग उसे देखकर क्या सोच रहे हैं । अब वह लगातार उनके भावो के उतार-चढाव को पढता चला जाता है । मन-ही-मन उनकी बातो और तर्कों को दुहरा कर हँसता है । अब उसकी चाल ढाल न केवल स्वाभाविक और सहज हो गई है, बल्कि चेहरे पर अजीब-सी मुसकराहट भी रहने लगी है । कि दूसरे के भीतर क्या चल रहा है, ऐसी पारदर्शी निगाह प्राप्त कर लेना कोई आसान काम

है ? इस सबके विश्लेषण से उसके मन मे बहुत बडा आत्म-विश्वास जागा । ये बिचारे कुछ भी नही कर पायेगे .

मगर जिसका उसे डर था, वही हुआ । शीघ्र ही उसे पता चल गया कि वे सामने पडने पर भले ही बहस बचाने, या बेकार झमेला मोल न लेने के कारण हाँ-मे-हाँ मिलाने लगते हो, पीठ पीछे वही सब कहते हैं, जो उसके मन मे कही दबा पडा है—साला ढोगी है ! दिखावा करता है ! पता नही, कहा से फटा-टूटा ढोल उठा लाया है और उसे पहन कर समझता है, जैसे खुदा हो गया है । सोचता है कि हीरो है और नया फैशन चला रहा है !' लीजिये साहब, लोग उदासीन न हो जाये, इसलिए उसने अपनी तरफ से खुलना और बहस करना शुरू किया, तो वे यह सब बकवास करने लगे । उसे उनसे बाते करने मे चिढ होने लगी —झूठे, मक्कार,चोर ! तुम लोग बाद मे जो कहोगे, मुझे सब पता है । एक-एक वाक्य को ज्यो-का-त्यो दुहरा सकता हूँ । हालत यहाँ तक हो गयी कि वह कोई ठीक बात भी कहता और कोई सामने वाला सहमत हो जाता तो वह चौक उठता । ज़रूर कोई गलत या झूठी बात है, तभी तो यह साला सहमत हो गया है ! जान-बूझकर गलत और झूठी बात कहकर सामने वाले को सहमत कर लेने मे जहाँ लोगो को आसानी से बेवकूफ बनाने का सतोष और अपने भीतर एक दुष्ट आत्म-विश्वास जागता, वही सही बात कहकर लोगो की सहमति और समर्थन देखकर उसे अपनी बात खुद झूठी और गलत लगने लगती । उसे सही और गलत का भेद समझ मे आना बद हो गया । एक साथ उसे सारी बातें सही लगती और एक साथ ही गलत। एक क्षण मे वह दुनिया का सबसे दुखी, दयनीय और धोखा खाया प्राणी होता और दूसरे ही क्षण सबसे बुद्धिमान अद्भुत और विशेष । सही और गलत के घपले की कुछ ऐसी धमा-चौकडी मचती कि उसका सिर चकरा जाता । अब तो उसे यह भी शक होने लगा कि वह अपने ऊपर विश्वास करता है, या नही अपनी किस्

बातको ठीक समझे किसको नही. वह औरो को बेवकूफ बना रहा है, या खुद बन रहा है .

लेकिन यह हालत अधिक समय तक नही रही और उसे पक्का विश्वास हो गया कि यह सबकी मिली-भगत है, एक भयकर साजिश है और उसे काटकर अलग कर दिया गया है। सालो ने उसके दिमाग की यह हालत कर दी है कि कोई दूसरा होता, तो अब तक पागल हो गया होता। सब लोग उसके खिलाफ साज़िश करते हैं, सब दुच्चे कमीने और घटिया है। सामने है-है करते हैं और पीठ-पीछे छुरी मारते है। इस नतीजे पर पहुँच कर उसने कुछ हलकापन महसूस किया। वह सीधा-सरल और कुछ अधिक अकलमद आदमी है और इन कमीनो से ऊँचा है, बस, यही उसका अपराध है। और इसलिये ये लोग किसी दिन या तो उसे फाडकर खा जायेगे, उसका ढोल और चौगा छीन लेंगे, या पकडकर जेल मे बन्द करा देगे, जैसाकि हर जीनियस के साथ होता है। हाँ, अब समझ मे आया कि वह 'जीनियस' है और बाकी लोग कीडे-मकोडो जैसे तुच्छ हैं, वरना ढोल की बात किसी और के दिमाग मे क्यो नही आ गयी ? वह कभी भी इन लोगो के बीच का आदमी नही बन पायेगा। इन दुष्टो की साजिश यही है। या तो ये उसे भी अपने जैसा ही मामूली और साधारण बना डालेंगे, या फिर छुतहा चुहे की तरह अकेला करके मार देगे। ऐसी साधारण-सी बात कुछ देर से समझ मे आयी कि न तो वह इतना नीचे उतर सकता है और न ये कमबख्त इतना ऊँचे उठ सकते है। इसलिए दोनो एक-दूसरे के साथ इतना अनकुस (अनकफर्टेबुल) महसूस करते हैं। अरे, इनसे तो कोई सवाद सभव ही नही है। सब साले उससे और उसके ढोल से जलते हैं।

मजबूरी यह थी कि अब वह पुराने शहर भी नही लौट सकता था। यही नहीं, वहाँ का कोई आदमी कभी दूर से दीख भी जाता तो वह कतरा जाता। हालाँकि यह भी जानता था कि वह खुद शायद इस 'धज' मे न पहचान पाये। जब सामने से कोई यों बिना उसे पहचाने निकल

जाता, तो कचोट उठती और मन ललक उठता कि वह दौडकर उससे लिपट जाये, उसे अपना नाम बताये, अपने हाल-चाल सुनाये, उसके सुने लेकिन अब ढोल के कारण वह ऐसा नही कर पाता था। यह भी शक होता था कि हो सकता है, यहाँ वालो ने उसके खिलाफ उन्हे भडका दिया हो और वे उसकी उपेक्षा कर रहे हो। वह दाँत पीस कर कहता, सबको समझूगा। अब तो बिलकुल साफ था कि उनके और उसके बीच एक लडाई की शुरुआत हो चुकी है और वह कही भाग भी नही सकता। लेकिन वह भागे क्यो ? वह भी इन्हे दिखा देगा कि किससे पाला पडा है। यह सोचकर वह मुसकराने लगा कि जिस योद्धा की तसवीर देखकर ढोल की बात उसके दिमाग मे आयी थी, आखिर उसे वही योद्धा बन जाना पडा। कोई बात नही, लडाई ही सही ! बात तो साफ हुई !

लेकिन बात साफ नही हुई थी। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि लडाई कहाँ से और किससे शुरू करे. ऊपर से तो सब मीठे-मीठे और बुगला भगत बने रहते है, पीठ पीछे जो कहते करते है, वह एक-एक बात समझता है। हुँह, यह उनकी लडाई की एक चाल है। उसे उनके इस भुलावे मे बिलकुल भी नही आना।

अब उसकी चाल-ढाल मे एक शहीद योद्धा जैसा कडक आ गयी। उसने अपने युद्ध का पूरा नक्शा तैयार कर लिया। उसने धीरे-धीरे लोगो से मिलना-जुलना, बात-चीत करना बंद कर दिया। उसका चेहरा मुहरा सख्त हो गया। अरे, मुझे तुम कमीनो की क्या चिंता ! अब वह अपनी हर बात मे एक खास निश्चितता और उद्दंड लापरवाही लाने की कोशिश करने लगा। इसके लिए भी उसने रोज शीशे के सामने अभ्यास किया। कभी किसी मतलब, जरूरत या जानकारी के लिए किसी से बातें भी करता, तो भीतर एक ग्लानि बनी रहती—किन लोगो के धरातल पर उतरना पड रहा है। अपनी हर मुद्रा से वह ऐसा जताने की कोशिश करता, जैसे वह उन पर अहसान कर रहा हो, वरना वे इस

लायक कतई नही हैं, उन्हे उसका आभार मानना चाहिए। लेकिन बदले मे जब वे ऐसा कोई भाव न दिखाते, तो उनका टुच्चापन उसके लिए और भी पक्का हो जाता। अपनी समझ मे उन्हें इस तरह जलाकर वह और भी मजा लेता और खुद अपनी निगाहो मे ऊँचा उठ जाता।

एकाध बार उसे भ्रम हुआ, जैसे कुछ और लोग भी कपडों के नीचे ढोल पहने घूम रहे हैं। यानी लडाई अब घोषित होती जा रही है और वे लोग भी अपनी तरफ से तैयारी कर रहे हैं। सालो ने छिपाने की तो भरसक कोशिश की है, लेकिन अब कोई उसकी निगाहो को धोखा दे सकता है? वह सबकी नस-नस पहचानता है। नकलची बदर! ओछे और बेअक्ल! इससे एक चीज़ तो पक्की होती ही है कि उनमे से हर आदमी उसकी तरह का ढोल पहनकर 'विशेष' और 'महान' बनना चाहता है। और इसीलिए उसकी सफलता पर कुढता है। उल्लू के पट्ठो, मैं तुम सबकी एक-एक की असलियत जानता हूँ। अपना तो कुछ नही है, नकल ही कर सकते हो तुम। लेकिन मैं भी देखूगा, कैसे मेरी तरह बनते हो! मन होता, उसके पास एक बुलडोज़र हो और सबको कमर तक गडवाकर बुलडोजर चलवा दे

उसके योद्धा और 'हीरो' होने का इससे अधिक प्रमाण और क्या होगा कि लोग उसकी नकल करते हैं। बातचीत, चाल-ढाल सबको उतारने के लिए पागल हैं। यह तो इस ढोल का ही प्रताप है कि वह ईर्ष्या जगा सकता है, फैशन चलाने की ताकत रखता है। अपनी महानता के इस सबूत से जहाँ उसे बहुत शक्ति मिली, वही यह डर भी सताने लगा कि अगर कही इन सब सालो ने ढोल पहनने शुरू कर दिये, तो वह कही का नही रहेगा! लेकिन फौरन ही उसने अपने आपको समझाया अरे, यह कही सब के बसकी बात है! इसके लिए बडे-बडे कष्ट सहने पडते हैं और अपने आपको तपाना पडता है। उसने रात-दिन कैसी-कैसी तकलीफे भोगकर, घृणा उपेक्षा और दया पीकर, हीरो होने का यह सम्मान पाया है। इस हीरो होने वाली बात से उसे अपने प्रति काफी

श्रद्धा हुई मुझ जैसा कमजोर, साधारण, सूखा आदमी भी इस ऊँचाई को प्राप्त कर सकता है, इस पर अचानक ही विश्वास नही होता। जरूर इस ढोल मे कोई दैवी शक्ति है और इसे सिद्ध करने के लिये कैसे उसने अपने शरीर को तोड-मरोड डाला है। कैसी शारीरिक और मानसिक यत्रणाए सही है! और अब क्या कुछ कम है! यह तो बाकायदा युद्ध और षडयत्र है! इस दृष्टि से विचार करने पर उसे लगा कि वह केवल योद्धा ही नही, जीता-जागता 'शहीद' है। पैगबर भी तो इतनी ही तकलीफ भोगते होगे। उसने हठ-योग साधना जैसा ही काम तो किया है।

योद्धा, निर्वासित, विजेता, शहीद अब यही सारे शब्द उसके दिमाग मे घूमते रहते थे। शीशे के सामने अपने को देखकर खुद ही उसका तन-मन भय से सिहर उठता उस जैसा साधारण और तुच्छ आदमी कितने महान और ऊँचे आदमी के सामने खडा है। इस तरह आमने-सामने खडे होना और आखे मिलाना हरेक के बसकी बात है! एक 'वह' शीशे के सामने खडा होता और एक 'वह' औरो के बीच खडा होकर उनकी 'नीचाई' पर उतरकर उनकी भाषा मे इस महान को देखता, श्रद्धा-भक्ति और भय से गद्‌गद् होकर झुक-झुक जाता। जालसाजी, झूठ, फरेब और टुच्चेपन से घिरा, लोगो की ईर्ष्या, जलन और उपेक्षा के बीच घुटता, यह 'महान जीनियस' बेचारा कितना अकेला और दुखी है! यह सोचकर ही आतक होता था कि अगर उसमे बुद्धि और शक्ति नही होती, तो पता नही ये लोग उसका क्या कर डालते।

उसका मिलना-जुलना, बाहर निकलना, सभी कुछ बद हो गया। उसने तय किया कि उसे खुद ही अपनी महानता की रक्षा करनी पडेगी। ऐसी नायाब और गैबी चीज को इन बेवकूफ और घटिया लोगो की दया पर नही छोडा जा सकता। ये तो उसे पल-भर मे तोड-फोड कर ठिकाने लगा देंगे। कभी कोई उससे मिलने आता, तो हमेशा ऐसा चौकन्ना रहता कि कही वह उसकी महानता का कोई फुंदना न तोड़ले।

वह उससे एक दूरी बरतता—ज्यादा मुँह लगाने से पास आने की कोशिश करेगा, इसलिए तोल-तोल कर और कम बोलता। हमेशा ढोल पड़ने रहने और कम चलने-फिरने से शरीर काफी अकड गया था, इस लिए कम-से-कम हरकत करता।

क्रमश उसने पाया कि वह औरो की निगाह मे 'सिद्ध' होता चला जा रहा है। उनसे निरतर चलने वाली लडाई को महसूस करते हुए भी यह सतोष का विषय था कि लोग उसके प्रति सम्मान का भाव रखते हैं। वह जानता था कि दूरी बनाये रखना शुरू मे भले ही कष्टदायक हो, लेकिन इसके बाद जो उनके और उसके बीच 'सेतु' बनता है, वह श्रद्धा का ही है। कभी उसे अपने पर ही गर्व होता कि कैसा क्षुद्र व्यक्ति कहाँ पहुँच गया और कभी लोगो पर क्रोध आता कि ये किसी की कीमत नही आँक पाते, मर जाऊगा, तब समझ मे आयेगा कि कैसा 'महान' इन नीचो के बीच ही मौजूद था।

जब से उसने ढोल ग्रहण किया था, उसका ज्यादातर सोचना सिर्फ अपने बारे मे ही होता था—यानी खुद अपने को लेकर, या उसे लेकर दूसरे जो सोचते है। सारे समय इसी उधेड-बुन और बे नाम-बेचेहरे लोगो को सवाल-जवाब देते-देते उसकी समझ मे सचमुच नही आता था कि सामने वाले साक्षात् व्यक्ति से क्या बाते करे। अगर सामने वाले चेहरे पर अपने 'महान व्यक्तित्व' के लिए श्रद्धा आतक या आश्चर्य देखता, तो जरूर बोलने मे आसानी हो जाती। यह सिद्धि प्राप्त करने के लिये वह कितनी-कितनी रातो नही सोया है। लोगो ने उसे मुँह पर पागल और ढोगी कहा है। बोलते-बोलते अपने प्रति दया और श्रद्धा से उसका गला भर आता। उस समय वह इस तरह के भाव दिखाता, जैसे किसी और के बारे मे बता रहा है। जब तक सामने वाली मुद्रा मे श्रद्धा और विश्वास दीखते, वह बोलता रहता। जहाँ जरा भी अविश्वास दीखता, तो ऐसी चालाकी से चुप हो जाता, जैसे कुछ सोचते-सोचते कही खो गया है। मन-ही-मन दाँत भीच कर कहता,—'तुम कमअकल, इन ऊँची बातो को

नही समझोगे. .इधर जिस तरह, जिस भाव से लोग आने लगे थे, उससे एक बात तो पक्की हो गयी थी कि वह चारो तरफ चर्चा का विषय हो गया है। एक जीता-जागता मिथक और लीजेंड बन गया है।

और इन्ही सब चिताओ, सवाल-जवाब और दिमागी उठा-पटक से गुजरने के बाद उसे नीद आना बद हो गया था। वह पहले अपने ढोल को रात को उतार कर अलग रख दिया करता था, लेकिन जब सोता था, तो उसकी रग-रग दुखती थी। यह सही है कि ढोल उतारने का काम वह एकदम अकेले मे, चारो तरफ से खिडकी-दरवाजे बद कर के ही करता था—लेटता, तो सारे समय ढोल की रखवाली करता। इस बात को एक क्षण नही भुला पाता था कि उसके और लोगो के बीच एक भयानक लडाई चालू है। वे हर समय उसका यह दैवी ढोल चुराने या उसे मार डालने की साज़िश करते रहते हैं। वे अब समझ गये है कि इस शक्ति का राज़ क्या है और रात-बिरात कोई भी घुस आ सकता है। उसे सारी रात चोरो और दुश्मनो की आहटें और खटके सुनायी देते रहते। अगर खुदा-न-खास्ता कोई घुस भी आया, तो अब उसमे इतनी ताकत नही थी कि ढोल का बचाव करता, इसलिए गुसलखाने-रसोई तक में उसे साथ ही ले जाता और उसे निहार कर खुश होता रहता। एक और बात पर भी उसका ध्यान गया कि ढोल जब शरीर पर नही होता, तब भी उसकी चाल-ढाल ऐसी होती, जैसे अभी भी उसे पहने हो ..वह सजीव चीज़ की तरह उस पर प्यार से हाथ फेरता और बाते करता .. इधर वह उसे पहन कर ही सोने लगा था। अब बिना उसके अपनी कल्पना भी असभव लगने लगी थी। वह सोचता कि बिना ढोल के जब वह खुद अपने को नही पहचान पाता, तो मान लो, कभी वह बाहर निकले, तो लोग उसे क्या खा कर पहचानेगे...लगेगा, जैसे चेहरा बदल कर घूमने निकला है। वह पुराने राजाओ की तरह वेश बदल कर लोगो के बीच घूमने, उनके भीतर की बात जानने के सपने देखा करता। दुनिया में उसके लिए केवल दो ही चीजें सच या सही थी—वह और

ढोल .,

'वह और ढोल .या वह या ढोल...' एक दिन अचानक ही यह सवाल उसके भीतर उठ खडा हुआ। नीद, थकान, द्वन्द्व और घुटने के कारण बहुत सोचना तो इस पर असभव था, लेकिन उसने पाया कि वह औरो की तरह से सोचता है। काल मे, स्थानो मे घूमता है, लेकिन उसका सारा कुछ इसी ढोल के आस-पास सिमट गया है। वह क्या औरो की तरह 'बाहरी आदमी' हो गया है, जिसके मन मे कही ढोल के प्रति दुर्भावनाएँ भरी है ? नही, नही, ऐसा कृतघ्न वह कभी नही होगा। मगर तब उसके और ढोल के बीच आपस मे सबध क्या है ? उसने अपनी सुरक्षा, सम्मान और शक्ति के लिए एक सिद्धि पायी थी अब क्या असली 'वह' नही है ?—इस तरह के धुधले-धुधले सवाल उसके मन मे इधर अक्सर ही उठने लगे थे।

एक बार वह कई दिनो तक घर से बाहर नही निकला और उसके घर से अजीब-सी गध आने लगी। खिडकी दरवाज़े, रोशनदान, सभी बद थे, तो लोगो ने दरवाजा तोडा...बिस्तर पर ढोल सहित वह लेटा था। लोग उससे डरने लगे थे, इस लिए वडे बहस-मुबाहिसे, हिचक और हिम्मत के बाद नाको पर रूमाल रख कर पास गये, तो पाया कि कही कोई हरकत नही है, वह मर गया है ! सारी खाना-पूरी तहकीकात के बाद जब अरथी बाहर निकाली गयी, तो किसी को पता भी नही चल सका कि छछूदर जैसा सूखा 'वह' कब और कहाँ सरक कर खो गया ...बादाम की मडी और सूखी मिगी जैसी चीज रही होगी।

और तभी एक चमत्कार हुआ—अरथी के फूल और मालाएँ फेक तोड कर ढोल अचानक उठ कर बैठ गया और इस तरह हाथ जोड कर मुसकराने लगा, जैसे लोगो के अभिवादन और अभिनन्दन स्वीकार कर

रहा हो। लोगो मे खलबली मच गयी...'राम नाम सत्य है' और 'हरि-बोल' की आवाजे गले मे घुट गयी.. उनकी समझ मे नही आ रहा था कि अरथी को फेक-फाँक कर चीखे मारते हुए इधर-उधर भागे, या .

●>

# गुलाम

रगे स्यार को राज तो मिल गया, लेकिन समस्या यह आयी कि अब शासन कैसे चलाया जाय। जगल मे शेर—चीते, भालू-भेडिये सभी थे और सब पर अपना हुक्म चलाना आसान नही था। उनमे से कौन कब अचानक बिगड खडा हो और अपनी ही जान के लाले पड जाये। राजा बनने के बाद भी तरह-तरह के भय और सदेह उसे सारे समय चील-कौवों की तरह खाते-नोचते रहते थे। कही किसी को असली बात का पता चल गया तो बोटी-बोटी अलग हो जायेगी—इसलिए नीद आना तो उसे वैसे ही बन्द हो गया था।

लोमडी पूछ फुलाये उसके आस-पास ही घूमती थी और इन दिनो वही उसकी सबसे भरोसे की और अच्छी सलाहकार थी। उसने राजा की चिन्ता समझ कर एक दिन बडे प्यार से कारण पूछा। राजा बोला, 'लोमडी रानी, इतना बडा राज है, समझ मे नही आता इसे कैसे चलाऊँगा? अन्दरूनी इन्तज़ाम देखता हूँ तो बाहरी हमलो का डर रहता है, और बाहर ज्यादा ध्यान दूँ तो यहाँ गडबडी होती है। इसी चिन्ता मे मैं हूँ कि सारी चीजे कैसे ठीक रक्खी जायें।'

लोमडी ने अक्लमदी से गभीर मुँह बनाकर कहा, 'आप एक एक

हिस्सा एक-एक को सौप दीजिए और समझा दीजिये कि वे अपनी सारी जिम्मेवारी को देखेगे, आप उन्हे मत्री बना लीजिए इज्जत दीजिए और समझा दीजिए कि वे सारी हालत रोज आपको बताते रहे। मेरा सुझाव यह है कि एक शेर बाहरी विभाग का अधिकारी हो और भेडिया घरेलू विभाग का।

राजा को अपनी लोमडी-रानी की अक्ल पर बहुत भरोसा था। उसे यह सलाह पसद आयी। यही सबसे सीधा तरीका भी था। लेकिन तब शेर और भेडिया दोनो आस-पास ही बने रहेगे, उनसे घटो बैठकर सलाह और विचार करने पडेगे। पता नही, कब कहाँ असलियत खुल जाय और लेने के देने पड जाये। राजा तो यह चाहता था कि राज अच्छे ढग से चले, लेकिन इस तरह के खूखार जानवरो से कम से कम मिलना जुलना हो। उसने हिचकिचाकर कहा, 'तुम्हारी सलाह तो एकदम ठीक है, लेकिन, .'

हिचक देखकर लोमडी राजा के मन की बात समझ गयी। बोली, 'नये और जवान लोगो मे जोश और गुस्सा तो बहुत होता है, समझ और अनुभव नही होते। राज-काज जोश से नही अनुभव और समझदारी से चलता है। इसलिए ये भेडिया और शेर ऐसे चुने जाये जो बूढे हो और अनुभवी हों और इनकी अपने-अपने समाज मे इज्जत हो...।'

हाँ बूढे होगे तो डर कम रहेगा। डरपोक और कमजोर का दिमाग़ बहुत चलता है। राजा के दिमाग़ मे अचानक ही आ गया कि इन बूढो को इज्जत और सुरक्षा की बडी भूख होती है। इनमे कुछ और तो रह ही नही जाता, अपने को इज्जतदार बता कर ये लोग सुरक्षित रहना चाहते हैं। दोनो को बराबर का ओहदा दिया जाय ताकि अपनी-अपनी इज्जत के लिए दोनो आपस मे ही लडते रहे और दोनो को एक दूसरे का डर बना रहे। अगर दोनो मिल गये तो अपने लिए खतरा बढ जायेगा। उसने खुद अपने आप को शाबाशी दी कि उसका दिमाग सचमुच चलता है और ऐसा कुशाग्र—बुद्धि प्राणी राजा होने ही लायक है। उसने सम-

भदारी से कहा, 'तुम्हारी बात ठीक है लोमडीरानी, हमे अनुभवी लोगों की जरूरत है। लेकिन मेरे राज मे सब बराबर हैं। शेर को मैं चाहे जितनी इज्जत की निगाहो से देखता होऊँ, लेकिन सरकारी तौर पर दोनो को बराबर का ही ओहदा दूँगा ताकि कहने को यह न हो जाये कि मैंने किसी के साथ पक्षपात किया . लेकिन मैं चाहता हूँ कि इनका सबंध सीधा मुझ से न रहकर तुमसे रहे।' उसने सोचा, इस तरह रोज-रोज उनका सामना होने से वह बच जायेगा।

लोमडी धन्य हो गयी। उसने प्रशसा और प्यार से राजा को देखा और जीभ से उसकी मूँछे चाटी। अगले दिन ही सभा बुलायी गयी और लोमडी ने बडे प्रभावशाली भाषण के बाद राजा की ओर से एक बहुत बूढे शेर और भेडिये को बाहरी और घरेलू शासन का भार सौंप दिया। अनुभवी और बडी उम्र की पूरी कद्र करते हुए भी राजा के लिए सब बराबर हैं और उनकी आज्ञा से दोनो को बराबर का दर्जा दिया जाता है, इस भाषण से प्रजा पर बडा अच्छा प्रभाव पडा। यह आशा भी प्रकट की गयी कि हमारे सामने बहुत काम हैं और अभी हमे बहुत कुछ करना है। आपसी सहयोग और सद्भावना से ही हम बडे और आगे बढे हुए राज्यों के बराबर पहुँच जायेंगे। तालियाँ बजी राष्ट्रगान गाया गया।

अब माद के भीतर अधेरे मे स्यार राजा बैठता, बाहर इधर-उधर दोनो बूढे—यानी शेर और भेडिया। उन्हे हटाया नही जा सकता, किस समय उनकी सलाह की जरूरत पड जाये, या उन्हे ही राजा को कोई खबर देनी पडे। लोमडी सदेश लाने-लेजाने के लिए बराबर बाहर-भीतर का चक्कर काटती। लेकिन राजा को हमेशा यही डर था कि पता नही कब भेद खुल जाये! उधर जो वह चाहता था वह भी नही हो रहा था, दोनो बेहद सुस्त और मरे से पडे रहते, मक्खियाँ भनभनाया करती। जब तक इन दोनो के बीच खटपट नही करायी जायेगी, न तो इनका यह सुस्ती टूटेगी और न जोश आयेगा। लेकिन शुरूआत कहाँ से को

जाय ? इधर राजा को यह महसूस हुआ कि सारी बाते लोमडी के जरिए नही कहलायी जा सकती। मन का अमन्त्री डर उसके सामने भी नही खुलना चाहिए। साथ ही यह भी लगा कि लोमडी भेडिये के आस पास बहुत चक्कर लगाने लगी है और दोनो सारे समय कुछ खुश-पुस किया करते हैं। हो न हो, लोमडी ने असली भेद भेडिये को बता दिया है और दोनो उसे मारकर खुद राजा रानी बन बैठने की साजिश कर रहे हैं। ऐसे मे अपनी बिरादरी के कुछ लोग मदद कर सकते थे, लेकिन उनसे डर था कि कोई दिलजला सबसे पहले ही भण्डा भी फोड सकता था !

आखिर बहुत दिमागी उठा-पटक के बाद उसने तय किया कि क्यों न भेडिये को राज्य की स्थिति देखने के लिए कुछ दिनो को बाहर भेज दिया जाय। इससे लोमडी से भी उसका मिलना-जुलना कम हो जायेगा और वह खुद भी आँखो से दूर रहेगा। उसने एक दिन लोमडी को बुलाकर राज्य की बुरी स्थिति का बखान किया और समझाया कि इस समय बहुत जरूरी है कि घरेलू मत्री सारे राज्य का दौरा लगाकर असली हालत बतायें। लोमडी राजा के पास ही रहती थी, सारे उतार-चढाव वह समझ गयी कि मामला कुछ और है। उसने जाकर सारी बात भेडिये को बतायी, उसे कुछ समझाया। थोडी ही देर मे गुर्राता हुआ भेडिया सीधा राजा के सामने जा पहुँचा।

'धूर्त, बदमाश गीदड, मेरे सामने चालाकी करने की कोशिश की तो एक पल मे ठिकाने लगा दूँगा। मैं तेरी असलियत जानता हूँ। तुझे शर्म नही आती कि बूढो को आराम से बैठने देने की बजाय इधर-उधर दौडाता है। डर और डाह से तेरा दिमाग खराब हो गया है।' भेडिये ने झपटने के लिए तैयार होकर राजा को सुनाया। लोमडी खिसक गयी थी।

भय और घबराहट से राजा को पसीना छूटने लगा। उसकी घिग्घी बंध गयी और मुँह से बोल निकलना मुश्किल हो गया। हकलाकर

कहा, 'भेडिये बाबा मेरी बात तो सुनो। मेरी असलियत आपके सामने खुल ही गयी है, अब मारो या जिलाओ –सब कुछ आपके हाथ मे ही है मैं तो आपकी दया पर ही हूँ। सब कुछ होते हुए भी आप ही मेरे पास पडते है। शेर और हाथी तो हमारी बिरादरी के भी नही है। आप इस गद्दी पर बैठिये, मैं आपकी सेवा करूँगा।' कह कर वह भेडिये के चरणो पर गिर पडा।

भेडिया अनुभवी था। उसने सोचा कुछ भी हो, जगल के सारे जानवर तो इसे राजा मानते है, वे इसे भगवान की तरफ से भेजा हुआ समझते है। मेरे राजा बनने से नया बखेडा खडा हो जायेगा। उसने ठडे होकर कहा, 'मुझे गद्दी लेकर क्या करना है। गद्दी पर तू ही बैठ लेकिन यह समझ ले कि हम इज्ज़तदार जानवर हैं और इज्ज़त से ही रहेगे। तू अपनी हैसियत मे रह और बूढो को इधर-उधर दौडाकर परेशान मत कर...।'

राजा खुशामद से उसके पाँव चाटता और पूँछ सहलाता रहा। तभी कही से लोमडी भी आ गयी और तीनो ने सलाह की कि राज्य की सरहदो की देख-भाल के लिये शेर को दौरे पर भेज दिया जाय।

लोमडी और भेडिये ने लगातार बाहरी हमलो और खतरो की बाते कह-कह कर, राजा की आज्ञा का हवाला देकर शेर को दौरे पर भेज दिया। शेर बडे बेमन से चला तो गया, लेकिन भीतर बहुत ही भुनभुनाया। सारे दिन लोमडी और भेडिये को "महल" मे आते-जाते देखकर उसे किसी गहरी साज़िश की गध भी आ रही थी। बुढापे मे आराम की जगह यह भाग-दौड उसे बिल्कुल भी पसद नही आयी।

इधर एक तरह भेडिया ही राज्य करने लगा था। वह राजा की आज्ञा के नाम पर चाहे जिसे मरवा देता, चाहे जिसे इधर से बदल कर उधर फेंक देता। सारे खास-खास ओहदो पर वह अपने और लोमडी के भाई-भतीजो को ले आया। उसके नाम से जगल के सारे जानवर काँपते थे और अब जब महल मे आता तो शान से गद्दी पर बैठता। राजा

अपने दोनो पजो से उसकी पूँछ दबाता और जीभ से उसका शरीर चाटता रहता। उसके सामने ही लोमडी और भेडिया इश्क लडाते रहते, आपस मे किलोले करते और वह मन ही मन कुढता हुआ इनकी सेवा करता। उसकी इज्ज़त और जान भेडिये के हाथ मे थी। कभी-कभी उसका मन होता कि बाहर जाकर अपनी सारी प्रजा को बता दे— भाइयो, मैं राजा-वाजा कुछ नही, एक छोटा और डरपोक गीदड हूँ और मेरा नाम ले-लेकर जो कुछ किया जाता है उसमे न मेरा हाथ है न मेरी जानकारी लेकिन जानता था कि ऐसा वह नही कर सकता। इतने दिनो धोखा दिया है इस आधार पर सारे जानवर उसे मार डालेगे, और अगर वे न भी मारें तो यह भेडिया तो छोडेगा नही। लोमडी भी उससे जा मिली है। वह भी कही मुझे नीचा समझती है। बस एक ही उम्मीद थी कि शेर लौट आये तो किसी तरह उस तक अपनी बात पहुँचाई जाय। तब तक तो पूँछ से भेडिये का चँवर डुलाते हुए सब कुछ बर्दास्त करना ही होगा।

शेर खुद ही गुस्से मे दहाडता हुआ लौटा था। कही भी कुछ नही था और उसे बेकार ही इन लोगो ने दौडा दिया था। वह सीधा महल मे घुसा चला गया। भेडिया नही चाहता था कि शेर और राजा मिलें, लेकिन शेर का मिज़ाज देखकर भीतर जाने और भेद लेने की हिम्मत नही पडी। उधर राजा भी अचानक शेर को सामने देखकर सकपका गया, उसकी बोली बन्द हो गयी। वह सीधा उसके चरणो पर लेट गया, 'महाराज, आपको परेशान करने मे मेरी कोई गलती नही है। मुझे तो इन लोगो ने किसी लायक नही रक्खा और मेरी कोई पूछ नही है। जो मन होता है, करते हैं। मैं तो एक तरह से यहाँ कैद हूँ। आप खुद सोचिए मेरी हिम्मत आपको परेशान करने की हो ही कैसे सकती है? मैं क्या जानता नही हूँ कि आप ही जगल के असली राजा है, आपके खून मे शासन करना है। मैं तो सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आप जैसे अनुभवी और रोबीले हाथो मे सारा राज-काज रहे और मुझे छुट्टी मिले। आपके साथ जो ज्यादती हुई है उसका मुझे सचमुच बहुत अफसोस है।'

यह सब सुनकर शेर दया से पिघल गया । उसकी समझ मे सारा खेल आ गया । वह एकदम बाहर निकला और सीधा भेडिये पर टूट पडा । जब तक कोई कुछ समझे, उसने भेडिये के टुकडे-टुकडे कर डाले । फिर उसी तरह लौटकर राजा को बताया कि उस बदमाश का सफाया कर दिया है । तुम राजा हो, राजा ही बने रहो । मैं इज्जत के साथ कही आराम करना चाहता हूँ । मुझे छुट्टी मिलनी चाहिए । राजा ने सोचा कि अगर ऐसा दयालु और शक्तिशाली शेर अपने पास बना रहे तो किसी का डर नही रहेगा । उसने फिर उसके पाँव चाटे, पूँछ दबाई, शरीर चाटा 'महाराज, आप इस उम्र मे कहाँ जगल-जगल मारे फिरेंगे ? आप यही रहिए, आप को सारी सुख-सुविधाएँ देने का जिम्मा मेरा है । हम लोग आप की सेवा करेंगे ।' खैर किसी तरह शेर मान गया । उधर लोमडी भी पलट गयी थी और राजा के पास आकर इस तरह शेर से रुकने का आग्रह करने लगी थी जैसे कभी भेडिये से उसका परिचय ही न रहा हो ।

अब शेर मजे मे अच्छे से अच्छा खाना खाता, जब तक मन होता रहता और बहुत थक जाता तो बाहर घूम आता । जब तक वह महल मे रहता, लोमडी और स्यार दोनो उसकी सेवा करते रहते । राजा उसकी पूँछ दबाया करता और लोमडी शरीर चाटती रहती । लोमडी ने पहिले भेडिये की तरह शेर को भी पटाने की कोशिश की, लेकिन शेर ने उसकी तरफ देखा भी नही । उसे भी लगा कि उसका उद्धार राजा की रानी बने रहने मे है । अब वह रानी बनकर सारा राज-काज देखती, राजा के नाम पर तरह-तरह की आज्ञाएँ जारी करती । इस तरह राजा का यश दिन दूना और रात चौगुना बढता चला गया । उसके योग्य शासन की चारो तरफ धाक जम गयी । राजा बिना शेर की सलाह के कुछ न करता । शेर भी बडा सुखी था ।

शेर बूढा तो था ही । एक दिन यो ही बाहर चहल-कदमी करने गया तो लौटा नही । या तो कही मर गया या किसी और ने उसे मार

दिया। जैसे ही महल मे खबर पहुँची तो चारो तरफ मातम छा गया। पूरे जगल मे सरकारी शोक मनाया गया, झडे झुका दिये गये। दफ्तरो की छुट्टियाँ हो गयी और चारो तरफ शोक-सगीत गूँजने लगा। राजा को सचमुच ही दु ख हुआ था। एक तो उसकी समझ मे ही नही आ रहा था कि सारा राज्य कैसे चलेगा वह किससे सलाह लेगा। भेडिया अपनी तेज़ बुद्धि के कारण और शेर अपने अभ्यास के कारण जिन मसलों को चुटकी मे हल कर देते थे उनमे स्यार राजा के हाथ-पाँव फूल जाते थे, दिमाग ही काम नही करता था। दूसरे, सारे दिन उसके हाथ-पाँव दर्द करते रहते, जीभ ऐंठती रहती, पूँछ दबाने और शरीर चाटने की ऐसी आदत पड गयी थी कि समझ मे ही नही आता था कि अपने पजो और जीभ का क्या करें। वह सुस्त और उदास रहने लगा।

एक दिन सारे जगल मे तहलका मच गया कि राजा बीमार हो गया ह और उसकी तबियत दिन-ब-दिन बिगडती चली जा रही है। राजा की हालत सचमुच बहुत ही खराब हो गयी थी और सारे सरकारी अफ़सर, मातहत इधर से उधर दौड-धूप कर रहे थे कि अब क्या होगा। ईश्वर का भेजा हुआ राजा अगर बीमार हो गया है तो जरूर कोई भारी मुसीबत राज्य पर आने वाली है। लोमडी बेचारी रात-दिन सेवा कर रही थी। राजा सूख कर काँटा हो गया था और कोशिश करने पर भी उसकी आवाज़ नही निकलती थी, बस आँखे फाडें इस छूटते वैभव और राजसी ठाठ बाट को देखा करता था। सबको लग गया कि अब राजा कुछ ही दिनो का मेहमान है। लोमडी सबसे कहती कि राजा को अपने दोनो प्रिय मन्त्रियो के जाने का ऐसा सदमा बैठा है कि अब शायद ही उठ सकें। वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगती अब पता नही कौन राजा हो ? उसे अपने सुख-आराम छिन जाने की चिन्ता हो रही थी। उधर यह भी समाचार उसे मिल रहे थे कि राजा बनने के लिए बडी-बडी उठा-पटक जगल के जानवरो मे चल रही है। किसी का कहना था कि फौजें विद्रोह कर देंगी और कोई सेनापति ही राजा बन बैठेगा, किसी का अन्दाज़ था

कि भेडिये के लाये हुए भाई-भतीजो मे से ही कोई राजा बनेगा। उधर राज्य-भर के हकीम-वैद्य रात-दिन एक करके राजा की जान वापस लाने मे लगे हुए थे।

तभी किसी ने खबर दी कि बहुत दूर जगल के किसी कोने की माद मे कोई बहुत ही बूढा स्यार-वैद्य रहता है और आस-पास उसकी बडी शोहरत है। वह किसी से कुछ लेता-देता भी नही है। फौरन राजा के चर दौडे गये और उस वैद्य को ले आये। बडी गम्भीरता से नाक पर चश्मा खिसका कर वैद्य ने राजा की हालत देखी। वह देखते ही राजा की असलियत समझ गया। लोमडी को एक तरफ ले जाकर उसने कुछ समझाया। लोमडी की समझ मे कुछ भी नही आया, लेकिन उसने फौरन ही सेवक दौडाये कि जैसे भी और जहाँ से भी हो, कोई मरा हुआ शेर या भेडिया लाया जाय। लोगो ने समझा कि शायद उसके किसी हिस्से की दवा बना कर राजा को खिलायी जायेगी। सारा राज-काज ठप्प हो गया था और लोग जल्दी से जल्दी राजा की समस्या को हल कर डालना चाहते थे।

बडी मुश्किल से किसी झाडी मे फँस कर भूख-प्यास से मरा हुआ एक सूखा-सा बाघ मिला। शेर या भेडिया मिला ही नही उस समय। खैर, बाघ की ठठरी अन्दर भेज दी गयी और जनता भीड लगा कर महलो के बाहर नये सूचना-पत्र की राह देखने लगी। वैद्य ने सबको महलो से बाहर निकाल दिया, सिर्फ लोमडी ही वहाँ रही। आज्ञा दे दी गयी कि कोई भीतर न आने पाये। अब वैद्य ने राजा को उठाकर बाघ के पैरो पर डाला और उसके पजे अपने हाथ मे पकड कर बाघ की पूछ सहलाने लगा। और कुदरत का कमाल देखिए, जैसे-जैसे उसके पजो से बाघ की पूछ सहलायी जाती रही, बीमार और बेहोश राजा मे उसी-उसी तरह शक्ति का सचार होता रहा। सारे शरीर मे चेतना आयी, आँखे खोली और राजा खुद ही जीभ से बाघ के पाँव और शरीर चाटने लगा।

सारे जगल मे खुशी की लहर दौड गयी कि वैद्य के इलाज से राजा की हालत सुधर गयी है। प्रार्थनाएँ और मगल-गान होने लगे, वैद्य का जय-जयकार होने लगा। और कुछ ही दिनो मे राजा स्वस्थ हो गया। वह और लोमडी मिलकर निहायत ही योग्यता और कुशलता से राज्य करने लगे। वैद्य के सिवा इस रहस्य की किसी को भी जानकारी नही हो पायी कि यह चमत्कार कैसे हुआ? आज भी राजा जब बाघ की पूँछ पर हाथ फेरता है या उसके पाँव चाटता है तो जादू की तरह उसके भीतर आत्म-विश्वास की लहरे आने लगती है। जटिल से जटिल समस्या के हल उसके दिमाग के सामने खुद ही खुलने लगते है। इस तरह वह दिन-रात अपनी साधना मे लगा, योग्यता पूर्वक राज-काज चला रहा है।

# अभिमन्यु की आत्म-हत्या

•

'I shall depart, steamer with swaying masts, raise anchor exotic landscapes.'

'Sea Breeze'
Mallarme'

तुम्हे पता है, आज मेरी वर्षगाँठ है और आज मैं आत्महत्या करने गया था ?

मालूम है, आज मैं आत्महत्या करके लौटा हूँ ?

अब मेरे पास शायद कोई "आत्मा" नही बचा, जिसकी हत्या हो जाने का भय हो। चलो, भविष्य के लिये छुट्टी मिली !

किसी ने कहा था कि उस जीवन देने वाले भगवान को कोई हक नही है कि हमे तरह तरह की मानसिक यातनाओ से गुज़रता देख-देख कर बैठा-बैठा मुसकुराये, हमारी मजबूरियो पर हँसे। मैं अपने आप से लडता रहूँ, छटपटाता रहूँ, जैसे पानी मे पडी चीटी छटपटाती है, और किनारे पर खडे शैतान बच्चे की तरह मेरी चेष्टाओ पर वह किलकारियाँ मारता रहे ! नही, मैं उसे यह क्रूर आनन्द नही दे पाऊँगा और उसका जीवन उसे लौटा दूँगा। मुझे इन निरर्थक परिस्थितियो के चक्रव्यूह मे डाल कर तू खिलवाड नही कर पायेगा कि हल तो तेरी

मुट्ठी मे बन्द है ही। सही है, कि माँ के पेट मे ही मैने सुन लिया था कि चक्रव्यूह तोडने का रास्ता क्या है, और निकलने का तरीका मैं नही जानता था, लेकिन . लेकिन निकलकर ही क्या होगा ? किस शिव का धनुष मेरे बिना अनटूटा पडा है ? किस अपर्णा सती की वरमालाएँ मेरे बिना सूख-सूख कर बिखरी जा रही है ? किस ऐवरेस्ट की चोटियाँ मेरे बिना अछूती बिलख रही है ?—जब तूने मुझे जीवन दिया है तो 'अह' भी दिया है, "मैं हूँ" का बोध भी दिया है और मेरे उस 'मैं" को हक है कि वह किसी भी चक्रव्यूह को तोड कर घुसने और निकलने से इन्कार कर दे. और इस तरह तेरे इस बर्बर मनोरजन की शुरुआत ही न होने दे...

और इसीलिए मैं आत्म-हत्या करने गया था, सुना ?

किसी ने कहा था कि उसपर कभी विश्वास मत करो, जो तुम्हे नही तुम्हारी कला को प्यार करती है, तुम्हारे स्वर को प्यार करती है, तुम्हारी महानता और तुम्हारे धन को प्यार करती है। क्योकि वह कही भी तुम्हे प्यार नही करती। तुम्हारे पास कुछ है जिससे उसे मुहब्बत है। तुम्हारे पास कला है, हृदय है, मुसकुराहट है, स्वर है, महानता है, धन है, और उसी से उसे प्यार है, तुमसे नही। और जब तुम उसे वह सब नही दे पाओगे तो दीवाला निकले शराबखाने की तरह वह किसी दूसरे मैकदे को तलाश कर लेगी और तुम्हे लगेगा तुम्हारा तिरस्कार हुआ। एक दिन यही सब बेचने वाला दूसरा दूकानदार उसे इसी बाज़ार मे मिल जायेगा और वह हर पुराने को नए से बदल लेगी, हर बुरे को अच्छे से बदल लेगी, और तुम चिलचिलाते सीमाहीन रेगिस्तान मे अपने को अनाथ और असहाय, बच्चे-सा प्यासा और अकेला पाओगे तुम्हारे सिर पर छाया का सुरमई बादल सरक कर आगे बढ गया होगा और तब तुम्हे लगेगा कि बादल की उस श्यामल छाया ने तुम्हे ऐसी जगह ला छोडा है जहाँ से लौटने का रास्ता तुम्हे खुद नही मालूम 'जहाँ तुम मे न आगे बढने की हिम्मत है न पीछे लौटने की ताकत। तब यह

छलावा और स्वप्न-भंग खुद मन्त्र टूटे साँप-सा पलट कर तुम्हारी ही एडी मे अपने दाँत गडा देगा और नस-नस से लपकती हुई नीली लहरो के विष बुझे तीर तुम्हारी चेतना के रथ को छलनी कर डालेगे और तुम्हारे रथ के टूटे पहिये तुम्हारी ढाल का काम भी नही दे पायेगे .. कोई भीम तब तुम्हारी रक्षा को नही आयेगा।

क्योंकि इस चक्रव्यूह से निकलने का रास्ता तुम्हे किसी अर्जुन ने नही बताया—इसलिए मुझे आत्महत्या कर लेनी पडी और फिर मैं लौट आया—अपने लिये नही, परीक्षित के लिये, ताकि वह हर साँप से मेरी इस हत्या का बदला ले सके, हर तक्षक को यज्ञ की सुगधित रोशनी तक खीच लाये।

मुझे याद है मैं बडे ही स्थिर कदमो मे बान्द्रा पर उतरा था और टहलता हुआ सी' रूट के स्टैण्ड पर आ खडा हुआ था। सागर के उस एकान्त किनारे तक जाने लायक पैसे जेब मे थे। पास ही मजदूरो का एक बडा-सा परिवार धूलिया फुटपाथ पर लेटा था। धुँआते गड्ढे जैसे चूल्हे की रोशनी मे एक धोती मे लिपटी छाया पीला-पीला मसाला पीस रही थी। चूल्हे पर कुछ खदक रहा था। पीछे की टूटी बाउण्ड्री से कोई झूमती गुनगुनाहट निकली और पुल के नीचे से रोशनी—अँधेरे के चारखाने के फीते-सी रेल सरकती हुई निकल गयी—विले पार्ले के स्टेशन पर मेरे पास कुल पाँच आने बचे थे।

घोडबन्दर के पार जब दस वजे वाली बस सीधी बैण्ड-स्टैण्ड की तरफ दौडी तो मैंने अपने आप से कहा—'वॉट डू आई केयर ? मैं किसी की चिन्ता नही करता !'

और जब बस अन्तिम स्टेज पर आकर खडी हो गयी तो मैं ढालू सडक पार कर सागर-तट के ऊबड-खाबड पत्थरो पर उतर पडा। ईरानी रेस्त्राँ की आसमानी नियोन लाइटे किसी लाइटहाऊस की दिशा देती

पुकार जैसी लग रही थी...नही, मुझे अब कोई पुकार नही सुननी. कोई और अप्रतिरोध पुकार है जो इससे ज्यादा ज़ोर से मुझे खीच रही है। दौडती बस मे सागर की सीली-सीली हवाओ मे आती यह गभीर पुकार कैसी फुरहरी पैदा करती थी। और मैं ऊँचे-नीचे पत्थरो के ढोको पर पाँव रखता हुआ बिलकुल लहरो के पास तक चला आया था। अँधेरे के काले-काले बालो वाली आसमानी छाती के नीचे भिचा सागर सुबक-सुबक कर रो रहा था, लम्बी-लम्बी सासे लेता लहर-लहर मे उमडा पड रहा था। रोशनी की आड मे पत्थर के एक बडे से टुकडे के पीछे जाने के लिए मैं बढा तो देखा कि वहाँ आपस मे सटी दो छायाएं पहले से ही बैठी है। 'इवनिंग इन पैरिस' की खुशबू पर अन-जाने ही मुसकुराता मै दूसरी ओर बढ आया। हाँ, यही जगह ठीक है, यहाँ से अब कोई नही दीखता। धम से बैठ गया था। सामने ही सागर की वह सीमा थी जहाँ लहरो के अजगर फन पटक-पटक कर फुफकार उठते थे और रूपहले फेनो की गोटे सागर की छाती पर यहाँ वहाँ अँधेरे मे दमक उठती थी। पानी की बौछार की तरह, छीटे शरीर को भिगो जाते थे और पास की दरारवाली नाली मे झागदार पानी उफ़न उठता था।

सब कुछ कैसा निस्तब्ध था! कितना व्याकुल था! हाँ यही तो जगह है जो आत्म-हत्या जैसे कामो के लिए ठीक मानी गयी है। किसी को पता भी नही लगेगा। सागर की गरज मे कौन सुनेगा कि क्या हुआ और बडे-बडे विज्ञापनो के नीचे एक पतली-सी लाइन मे निकली इस सूचना को कौन पढेगा? इस विराट बम्बई मे एक आदमी रहा, न रहा। मैंने ज़रा झाँक कर देखा। मछुओ के पास वाले गिरजे से लेकर इरानी रेस्त्राँ के पासवाले मण्डप तक, सडक सुनसान लेटी थी। बँगलो की खिडकियाँ चमक रही थी और सफेद कपडो के एकाध धब्बे से कही-कही आदमियो का आभास होता था। रात का आनन्द लेने वालो को लिये टैक्सी इधर चली आ रही थी।

असल मे मैं आत्म-हत्या करने नही आया था। मैं तो चाहता था। कोई मरघट जैसी शान्त जगह, जहाँ थोडी देर यो ही चुप बैठा जा सके। यह दिमाग मे भरा सीसे-सा भारी बोझ कुछ तो हल्का हो, यह साँस-साँस मे सरकती सुई की नोक-सा दर्द कुछ तो थमे। लहरें सिर पटक-पटक कर रो रही थी और पानी कराह उठता था। घायल चील-सी हवा इस क्षितिज तक चीखती फिरती थी। आज सागर-मथन ज़ोरो पर था। चारो ओर भीषण गरजते अँधेरे की घाटियो मे दैत्य-वाहिनी की सफें की सफें मार्च करती निकल जाती थी। दूर, बहुत दूर, बस दो-चार बत्तियाँ कभी-कभी लहरो के नीचे होते ही झिलमिला उठती थी। बाँई ओर नगर की बत्तियो की लाइन चली गयी थी। सामने शायद कोई जहाज़ खडा है, बत्तियो से तो ऐसा ही लगता है। इस चिग्घाडते एकान्त मे, मान लो, एक लहर ज़रा-सी करवट बदल कर इधर झपट पडे तो ? किसे पता चलेगा कि कल यहाँ, इस ढोके की आड मे, कोई अपना बोझ सागर को सौपने आया था, एक पिसा हुआ भुनगा। मगर आखिर मै जियूँ ही क्यो ? किसके लिए ? इस ज़िदगी ने मुझे क्या दिया ? वही अनथक सघर्ष...स्वप्न-भग, विश्वासघात और ज़लालत। सब मिला कर आपस मे गुत्थम-गुत्था करते दुहरे-तिहरे व्यक्तित्व, एक वह जो मैं बनना चाहता था, एक वह जो मुझे बनाना पडता था .

और उस समय मन मे आया कि क्यो नही कोई लहर आगे बढ कर मुझे पीस डालती ? थोडी देर और बैठूँगा, अगर इस ज्वार मे आये सागर की लहरें तब भी आगे नही आयी तो मैं खुद उसके पास चला जाऊँगा। और अपने को उसे सौंप दूँगा ..कोई आवेश नही, कोई उत्तेजना नही स्थिर और दृढ...खूब सोच-विचार के बाद .

अँधेरे के पार से दीखती रोशनी के इस गुच्छे को देख-देख कर

जाने क्यो मुझे लगता है कि कोई जहाज है जो वहाँ मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। जाने किन-किन किनारो को छूता हुआ आया है और यहाँ लगर डाले खडा है कि मैं जाऊँ और वह चल पडे। यहाँ से दो-तीन मील तो होगा ही। कही उसी मे जाने के लिए तो मै अनजाने रूप से नही आ गया...क्यो कि वह मुझे लेने आयेगा यह मुझे मालूम था। दिन भर उस जानने को मैं झुठलाता रहा और अब आखिर रात के साढे दस बजे बम्बई की लम्बी-चौडी सडके, और कन्धे रगडती भीडे चीरता हुआ मैं यहाँ चला आया हूँ। जाने कौन मन मे घिसे रिकार्ड-सा दिन भर दुहराता रहा है कि मुझे यहाँ जाना है, मुझे जाना है। अनजान पहाडो की खूँख्वार तलहटियो से आती यह आवाज़ हातिम ने सुनी थी और वह सारे जाल जजाल तोड कर उस आवाज के पीछे-पीछे चला गया था। जाने क्यो मैने भी तो जब-जब पहाडो के चीड और देवदारु-लदे ढलवानो पर चकमक करती बर्फानी चोटियो और लहराते रेशम से फैले सागर की तरगो को आँख भर कर देखा है, मुझे वही आवाज़ सुनाई दी है और मुझे लगा है कि उस आवाज़ को मैं अनसुनी नही कर पाऊँगा। हिप्नोटाइजड की तरह दोनो बाँहे खोल कर अपने को इस आवाज़ को सौप दूँगा। अब भी इसी पुकार पर मैं अपने आपको पहाड की चोटी से छलाँग लगा कर लहरो तक आते देख रहा हूँ। वह जहाज मेरी राह मे जो खडा है। मैं आवाज़ देकर उन्हे बता देना चाहता हूँ कि देखो मैं आ गया हूँ... देखो, मैं यहाँ बैठा हूँ, मुझे लिये बिना मत जाना।

मुझे लगता है एक छोटी-सी डोगी अभी जहाज़ से नीचे उतार दी जायेगी और मुझे अपनी ओर आती दिखाई देगी बस, उस लहर के झुकते ही तो दीख जायेगी। इसमे एक अकेली लालटेन जल रही होगी। समय की उस अनादि लहराती धारा मे एक लालटेन वाली नाव! कहाँ पढा था? हाँ, याद आया चैखव की "कुत्ते वाली महिला"

मे ऐसा ही दृश्य है जो एक अजीब कवित्वपूर्ण छाप **छोड़ गया है** मन पर .. गुरोव और सर्जिएव्ना को मैं भूल **गया हूँ [अभी** तो देखा था उस पत्थर की आड मे] मगर इस **फुफकारते सागर को** देख-देख कर मेरा सारा अस्तित्व सिहर उठता है । यह गुर्राते शेर सी गरज और रह-रह कर मूसलाधार पानी की तरह दौडती लहरो की वल्गा-हीन उन्मत्त अश्व-पक्तियाँ । मुझे इस चक्रव्यूह से निकलने का रास्ता कोई क्यो नही बताता ? अलीबाबा के भाई की तरह मैंने भीतर जाने के सारे रास्ते पा लिये है लेकिन उस "सिम सिम खुलजा" मंत्र को मैं भूल गया हूँ जिससे बाहर निकलने का रास्ता खुलता है । लेकिन मैं उस चक्रव्यूह मे क्यो घुसा ? कौन-सी पुकार थी जो उस नौजवान को उस अनजान देश की शाहज़ादी के महलो तक ले आयी थी ?

दूर सतखण्डे की हाथीदाँती खिडकी से झाँकती शाहज़ादी ने इशारे से बुलाया और नौजवान न जाने कितने गलियारे और बारहदरियाँ लाँघता शाहज़ादी के महलो मे जा पहुँचा । सारे दरवाज़े खुद-बखुद खुलते गये । आगे झुके हुए ख्वाजासराओ के बिछाये ईरानी कालीन और किवाडो के पीछे छिपी कनीज़ो के हाथ उसे हाथो-हाथ लिय चले गये, और नौजवान शाहज़ादी के सामने था... ठगा और मन्त्र-मुग्ध । ,

शाहज़ादी ने उसे तोला, अपने जादू और सम्मोहन को देखा और मुसकुरा पडी । नौजवान होश मे आ गया । हकला कर बोला "हीरे बेचता हूँ, जहाँपनाह ।"

'हाँ, हमे हीरो का शौक है और हमने तुम्हारे हीरो की तारीफ़ सुनी है ।'

और उसकी चमडे की थैली के रगीन चमकने अगारे शाहज़ादी की गुलाबी हथेली पर यो जगमगा उठे जैसे कमल पर ओस की बूँदें सतरगी किरणो मे खिलखिला उठे. उसे हीरो का शौक था । उसे

हीरो की तमीज थी। उसके कानो मे हीरे थे, उसके केशो मे हीरे थे, कलाइयाँ हीरो से भरी थी और होठो के मखमल मे जगमगाते हीरो पर आँख टिकाने की ताब उस नौजवान मे नही थी।

'कीमत ?' सवाल आया।

'कीमत ••?'

'क़ीमत नही लोगे क्या ?' शाहज़ादी के स्वर मे परिहास मुखर हुआ।

नौजवान सहसा सँभल गया 'क्यो नही लूँगा हुजूर ? यही तो मेरी रोजी है। कीमत नही लूँगा तो बूढी माँ और अब्बा को क्या खिलाऊँगा।' लेकिन वह कही भीतर अटक गया था। उसकी पेशानी पर पसीना चुहचुहा आया।

'क़ीमत क्या, बता दे ?' किसी ने दुहराया।

'आपसे कैसे अर्ज करूँ कि इनकी कीमत क्या है ? ज़रूरतमन्दो और पारखियो के हिसाब से हर चीज़ की कीमत बदलती रहती है। आपको इनका शौक है, आप ज्यादा जानती है।'

'फिर भी, बदले मे क्या चाहोगे ?' शाहज़ादी ने फिर पारखी निगाह से हीरो को तोला। उसकी आवाज दबी थी 'लगते तो काफी कीमती हैं।'

'हुजूर जो मुनासिब समझें। खुदारा, मैं सचमुच नही जानता कि इनकी कीमत आपसे क्या माँग लूँ ? आप एक दीनार देगी, मुझे मजूर है।' नौजवान कृतार्थ हो आया।

'फिर भी आखिर, अपनी मेहनत का तो कुछ चाहोगे ही न।' शाहज़ादी की आँखो के हीरे चमकने लगे थे और उनमे प्रशसा झूम आयी थी।

'हीरो को सामने रख कर शाहज़ादी इनकी मेहनत की कहानी सुनना

पसद करेगी ? इस बार नौजवान की वाणी मे आत्मविश्वास था और उसने गर्दन उठा ली थी। होठो पर मुसकुराहट ऐठ आयी थी।

'तुम लोग ये सब लाते कहाँ से हो ?'

'कोहकाफ से !'

'कोहकाफ' सुन कर ताज्जुब से खुले शाहज़ादी के मुँह की ओर नौजवान ने देखा और बाँहो की मछलियो को हाथो से टटोलते हुए बोला 'तो सुनिये, मेढो और बकरो का एक बडा झुण्ड लेकर मैं पहाडी की सबसे ऊँची चोटी पर जा पहुँचा। वहाँ उनको मैंने जिबह कर डाला और उनके गोश्त को अपने बदन पर चारो तरफ इस तरह बाँध लिया कि मैं खुद भी गोश्त का एक भारी लोथ लगने लगा। उसी गलाज़त और बदबू मे मुझे वहाँ कई दिन बारिश और धूप सहते रहना पडा। तब फिर आँधी की तरह वह उकाब आया जिसका मुझे इन्तज़ार था। चारो ओर एक जलजले का आलम बरपा हो गया था। उसने झपट कर मुझे अपने पजो मे दबोचा और बच्चो को खिलाने के लिए ले चला घोसले की तरफ। बीच आसमान मे लटकता मैं चला जा रहा था। आखिर मैंने अपने आप को एक बहुत ही वसीह खुली घाटी मे पाया। यही कोहकाफ था। यहाँ एक चोटी पर मादा उकाब अपने बच्चो को दूध पिला रही थी। जैसे ही मैंने ज़मीन छुई, छुरी की मदद से अपने को फौरन ही उस सडे गोश्त से अलग कर लिया, और चुपचाप एक चट्टान की आड मे हो गया। चारो ओर देखा तो मेरी आँखें खुशी से दमकने लगी। वह घाटी सचमुच हीरो की थी। कितने भरूँ और कितने छोडूँ ! मैं सब कुछ भूल कर दोनो हाथो से हीरे अपनी झोली मे भरने लगा। लेकिन यह देख कर मेरी ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे रह गयी कि चारो तरफ उस घाटी मे भयानक अज़दहे लहरा रहे थे—उकाब के डर से उस चोटी के पास नही आते थे, लेकिन जैसे उस चोटी की रखवाली कर रहे हो। उनकी फुकारों से सारी घाटी गूँज रही थी। जलती लपटो

सी जीभे देख-देख कर मेरे तो सारे होश फना हो गये। अब कैसे लौटूं ? आखिर मैने मौत की परवाह न करके फिर उसी उकाब के साथ वापस आने की सोची और फिर उसके पजे से जा चिपका। बीच मे पकड छूट गयी, क्यो कि दो दिन लगातार लटके उडते रहने से मेरे हाथो ने जवाब दे दिया था। छूट कर जो गिरा तो सीधा समुन्दर मे जा पडा। खैर, किसी तरह एक बहता हुआ तख्ता हाथ लगा और उसी के सहारे आपके इस खूबसूरत मुल्क मे आ लगा।' नौजवान की आवाज़ मे चुनौती और आत्म-विश्वास दोनो थे। 'यह मेरी मेहनत की कहानी है, शाहजादी।'

शाहजादी ने उस जॉबाज़ नौजवान को प्रशसा की निगाहो से देखा, 'आफरी ! सचमुच आदमी तुम हिम्मत वाले हो ?' फिर जाने क्या सोचती-सी अनमनी अपलक आँखो से उसे देखती रही देखती रही और दूर कही हीरे की घाटियो मे खो गयी। वह भूल गयी कि उसके होठों की वह मुसकुराहट अभी तक अन-सिमटी पडी है। वही कही दूर से बोली 'यो चारो तरफ से गलाजत मे लिपटे, पजे मे बधे अनजानी खूँख्वार अन्धेरी घाटियो मे उतरे चले जाने मे कैसा लगा होगा तुम्हे ? और फिर जब तुमने भट्टी-सी जलती अजदहो की आँखे देखी होगी।' फिर उसे होश आ गया। स्नेह से बोली—'अच्छा कीमत बोल दो अब। और देखो, हमे इसी घाटी के हीरे और चाहिएँ।'

'आपने इन्हे परखा, मेरी मेहनत को देखा, बस आपकी यह हमदर्दी मुसकुराहट ही इनकी कीमत थी और वह मुझे मिल गयी।' हिम्मत करके वह बोला—'और पारखी की यह हमदर्दी मुसकुराहट मुझे' मिलती रहे, मैं फिर गलाजत और गन्दगी मे लिपटूँगा' फिर खौफ-नाक गारो और घाटियो मे उतरूँगा और फिर भयानक अज़गरो और अज़दहो के माथो से क़ीमती मणि और हीरें चुन-चुनकर लाऊँगा।

बारहदरियो के पार अब कोई मुसकुराती आवाज़ उसे नही खीचती थी। और उसने पाया कि उस जादुई गुफा का 'खुल जा सिम सिम का मन्त्र उसे बिल्कुल याद नही आ रहा। वह हिन्दी-जादूगर के बताये उस काठ के घोडे पर चढकर बादलो मे उडने तो लगा था, लेकिन उसे नीचे उतारने की कल उसे मालूम नही थी।

माँ सुभद्रा, तुम चक्रव्यूह की बात सुनने-सुनते सो क्यो गयी थी?

जहाज़ अभी मेरी राह देख रहा था और बत्तियाँ अभी भी आँखे झपका-झपका कर मुझे बुला रही थी...मरोड़े खाते हुए झाग उगलती लहरो की अप्रतिरोध्य पुकार अभी भी बाँह पकड कर खीच रही थी। और उनकी मणियाँ अब भी कठोर पत्थरो पर बिखर-बिखर जाती थी। हाँ सुभद्रा तो मेरे एक दोस्त की पत्नी का नाम है न... कैलाश की पत्नी का।

कैलाश की पत्नी के नाम के साथ ही उसका एक किस्सा आँखो के आगे उभर कर आता है।

पाँच साल मे ही सुभद्रा ने पाया कि कैलाश के साथ उसका निर्वाह नही हो सकता। अपनी एक पुरानी क्लास-फैलो से उसका प्यार है, पत्नी के साथ तो जैसे वह केवल कर्त्तव्य निभा रहा है। उसने कैलाश के पतलून के जेब से निकले खत से जान लिया कि उसे मीना का नवीनतम खत मिला है तो वह अपमान से रो पडी। बहुत बार रोई थी वह इस बात को लेकर, बहुत बार उसने सिर फोडे थे, मायके गई थी, और बहुत बार अपने बडे लडके प्रदीप को धुना था। चूल्हो मे न जाने कितनी बार पानी औंधाया गया, न जाने कितनी बार थालियाँ फेकी गयी और कैलाश ने साफ कह दिया था, 'अब मेरे बस का नही है कि अपने बचपन के दिनो से चले आते पन्द्रह-बीस साल के सम्पर्क को तोड लूँ। मीना मेरे व्यक्तित्व और जीवन का एक भाग बन गयी है। पिता

का दिया हुआ फर्ज़ तुम हो, और मीना मेरा अपना फर्ज़ है। मुझे कही तो ज़िंदा रहने दो।'

'ठीक है, तुम ज़िंदा रहो, तुम्हारी मीनाजी ज़िंदा रहे। मैं जा रही हूँ', जब लड़ाई अपने चरम पर पहुँच गयी तो सुभद्रा भाभी ने कहा। वह सचमुच आजिज़ आ गयी थी। कभी-कभी कैलाश का व्यवहार उसके प्रति ऐसा हो जाता कि मुझे खुद बुरा लगता। 'मैं अब तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँगी। सम्भालो अपने बच्चो को..।'

'टल जाती तो जीवन मे शान्ति आती', कैलाश ने क्रुद्ध कर जवाब दिया।

उसने छ महीने के धीर को कैलाश की गोद मे ला पटका और बैठकर धरती पर नीला-थोथा पीसने लगी। ऐसी धमकियाँ कैलाश बहुत बार देख चुका था, बैठा देखता रहा। औटते दूध मे नीला-थोथा डाला गया, मगर वह मनहूस और बुझा बैठा देखता रहा। सुभद्रा भीतर चली गयी तो उसने सुनाया, 'तुम्हे कसम है अपने घर वालो की जो इसे पी ही न लो। या लाकर मुझे दे दो, मैं पी जाऊँगा।' लेकिन उसके जाने के ढग से सहम कर बच्चे को खाट पर डाल कर जब तक कैलाश भीतर पहुँचे-पहुँचे, तब तक गिलास खाली हो चुका था और सुभद्रा पल्ले से मुँह पोछ रही थी। तब कैलाश झटके से जैसे सचेत हुआ। झपट कर उसने सुभद्रा को बाँहो मे भर लिया। 'और सुभद्रा, सुभद्रा! बताओ, तुमने सचमुच वह दूध पी लिया?' फिर उसने गिलास के तले मे चिपका नीला-थोथा देखा। सुभद्रा हाँफती हुई झूम रही थी। वह बौखलाया सा भागा-भागा मेरे पास आया—'चलो, चलो। अभी एमर्जेन्सी चलना है। सुभद्रा ने ज़हर पी लिया है। नीला थोथे मे मिला कर जाने क्या पी लिया है और अब हिलती डुलती भी नही है।' कैलाश पागल हो गया था, मैं वहाँ पहुँचा तो सुभद्रा के होठो के कोनो से

नीला-नीला पानी जैसा टपक रहा था। आँखे शराबियो की तरह बोझ से बन्द थी। गोद मे भर कर हमने उसे ताँगे मे रक्खा, झटक झटक कर जगाये रखने की कोशिश करते रहे। पलके उठा-उठा कर आँखे खोलते रहे। लेकिन वह होश मे नही थी। प्रदीप माँ से चिपक कर रो पडा। उफ, सुभद्रा भाभी ने यह क्या कर डाला?

एमर्जेंसीवार्ड मे मुँह मे नली डाल-डाल कर उन्हे कै करायी गयी, सोने न देने की पूरी कोशिश की गयी और जब विश्वास हो गया कि सारा ज़हर निकल गया तो नाक मे नलियाँ डाल कर ऑक्सीजन दिया जाने लगा। तभी उन्हे होश आया, पलके उठी। प्रदीप तो पास ही खडा था। बगल मे पडे अपने बेजान हाथ मे उन्होने प्रदीप का छोटा-सा हाथ महसूस किया, उसे दबाया, पहचाना। तब सहसा उन्होने तडप कर नलियाँ निकाल कर फेक दी और ज़ोर से रो पडी— 'डाक्टर साहब, मुझे बचा लो। मेरे बच्चे बहुत छोटे-छोटे है। उन्हे कौन देखेगा? कौन कपडे पहनायेगा, सुलायेगा कौन उन्हे? मुझे मेरे बच्चो के लिए बचा लो डाक्टर साहब। मैं भीख माँगूँगी, आटा पीसूँगी, लेकिन इन बच्चो के लिए जिऊँगी।'

मेरी आँखो मे आँसू आ गये थे!...

दूर जहाज़ो की झिलमिलाती बत्तियो मे सुभद्रा भाभी का चेहरा उभर आया था, मुझे मेरे बच्चो के लिए बचा लो, डाक्टर साहब। मैं भीख माँगूँगी, मैं आटा पीसूँगी और इन बच्चो के लिए जिऊँगी।'

सुभद्रा भाभी, माँ थी—वह कैलाश के लिए जहर खाकर मर सकती थी, लेकिन बच्चो के लिए मौत के चगुल से छूटकर भी आ सकती थी। मैंने तो अपने 'बच्चो' को नौ महीने नही, नौ-नौ वर्ष दिमाग मे रक्खा है, न जाने कितना खून और नीद देकर पाला है और उन्हे

छोड कर यहाँ चला आया हूँ मरने ?—यहाँ, जहाँ की हर प्रतिध्वनि कहती है 'मुझे मेरे बच्चो के लिए बचा लो डाक्टर '

और मैं झटके से उठ बैठा, ठीक जैसे सुभद्रा भाभी उठी थी। हाथ मे ककड को ज़ोर से घुमाकर लहरो पर फेंक दिया और दूर प्रतीक्षा करते जहाज की ओर गरजती लहरो से बोला—'नही, दोस्त सागर, अभी नही अभी नही अँधेरे की गरजती लहरो! भाई जहाज फिर कभी आना। आज तो मैं लौट रहा हूँ ।' तब मैंने देखा कि लहरो के फुहार मे मेरे कपडे सराबोर हो गये थे।

फिर मै लौट आया। ऊबड-खाबड पत्थरो के ढोको पर कदम रखता हुआ खन्दको को पार करता हुआ जैसे शिव लौट आये थे सती की लाश को कन्धे पर लाद कर।

वह मेरी आत्मा की लाश थी

सुना, आज अपनी वर्षगाँठ पर मैं 'आत्म-हत्या' करके लौटा हूँ

# कलाकार

बहुरूपियो के बारे मे हम सब जानते हैं । इन लोगो का पेशा अब समाप्त होता जा रहा है, लेकिन किसी समय रईसो और अमीरो का मनोरजन करनेवाले बहुरूपिये प्राय हर नगर मे पाये जाते थे । ये कभी धोबी का रूप लेकर आते थे, कभी डाकिये का । हू-ब-हू उसी तरह का व्यवहार करके ये प्राय लोगो को भ्रम मे डाल देते थे और यही इनकी सफलता थी, धोखा खा जाने वाला रईस इन्हे इनाम देता था । इसी तरह के बहुरूपिये का एक किस्सा मैंने राजस्थानी लोक-कथाओ मे सुना था और मुझे वह अभी भी अच्छी तरह याद है । मुझे लगता है कि हम सबके भीतर कही न कही उसी तरह का एक बहुरूपिया बैठा है ।

एक बार एक बहुरूपिये ने साधु का रूप बनाया सिर पर जटाएँ नगे शरीर पर भभूत, माथे पर त्रिपुण्ड, कमर मे लगोटी । उसके रूप मे कही कोई कसर नही थी और वह एकदम ससार-त्यागी साधु ही लगता था । उसने नगर से बाहर बडे से पेड के नीचे अपनी कुटी तैयार की, बगीचा लगाया और बैठकर तपस्या करने लगा । धीरे-धीरे सारे नगर मे समाचार फैलने लगा कि बाहर एक बहुत पहूँचे हुए महात्मा ने आकर डेरा लगाया है । लोग उसके दर्शनो को आने लगे और धीरे-धीरे

चारो तरफ साधु का यश फैल गया। सारे दिन उसके यहाँ भीड लगी रहती थी। लोग कहते थे कि महात्माजी के उपदेशो मे जादू है और उनके आशीर्वाद से ससार के बडे-से-बडे कष्ट दूर हो जाते हैं। अपनी इस कीर्ति से साधु को कभी-कभी बडा आश्चर्य होता और मन-ही-मन वह अपनी सफलता पर मुसकुराया करता।

नगर के सबसे बडे सेठ से जब किसी ने साधु का ज़िक्र किया तो अविश्वास से हँस पडा। बोला 'ऐसे ढोगी जाने यहाँ कितने आते रहते हैं।' ग्रौर वह अपने कारोबार मे लग गया। लेकिन साधु का नाम चारो ग्रोर फैलता जा रहा था। साधु भी कभी-कभी सोचता, कि अब फिर बहुरूपिया जीवन मे लौटने मे क्या रखा है, क्यो न इसी जीवन मे ग्रपनी ज़िदगी लगा दी जाये। लेकिन फिर उसका मन धिक्कारने लगता कि वह ज़िन्दगी-भर साधु बना रहा तो अपने असली पेशे के साथ बेईमानी करेगा। इसी सोच-विचार मे उसके दिन निकलने लगे।

एक बार सेठ की पत्नी वहुत बीमार हो गयी, दुनिया-भर के इलाज़ कराये, सभी वैद्य-डाक्टर बुलाये, लेकिन सेठानी की तबियत ही ठीक नही हुई। उसे लगता था कि वह अब नही बचेगी। मित्रो ग्रौर शुभ-चिन्तको ने सलाह दी कि एक बार उस साधु को दिखा देने मे क्या हानि है। हारकर सेठ तैयार हो गया। साधु ने जब दूर से सेठ को आते देखा तो बहुत ही प्रसन्न हुआ। नगर का सबसे बडा करोडपति उसके यहा आ रहा था आगे-आगे सेठ और फिर डोली मे बीमार सेठानी। उसने जाकर साधु के चरण पकड लिये—'महाराज, जैसे भी हो सेठानी को जीवन-दान दीजिए। यह मेरे घर की लक्ष्मी है। इसी के कारण यह करोडो की सम्पत्ति ग्रायी है। जिस दिन से इसने मेरे यहा पाँव रखा है, मैंने जिस काम मे हाथ लगाया, उसमे लाभ ही हुआ है। अगर इसे कुछ हो गया तो मैं कही का नही रहूगा।

साधु ने गभीर चेहरा बनाकर डोली का परदा उठाया। सेठानी

बीमारी मे बेहोश पडी थी । 'भगवान ने चाहा तो सेठानी सात दिन मे ठीक हो जायेगी ।' उसने कहा और धूनी की चुटकी-भर राख उसके ऊपर डाल दी । फिर रोज आने को कहकर अपनी आँखे मूदकर समाधि मे लग गया ।

सेठानी रोज आने लगी । और सयोग की बात कि धीरे-धीरे उसकी तबियत भी सुधरने लगी । सात आठ दिनो मे लगने लगा कि उसकी बीमारी अब समाप्त होने लगी है । सेठ को साधु पर घनघोर विश्वास हो गया और वह रोज उसके पास आने लगा । सेठानी ठीक हो गयी, लेकिन सेठ रोज आता रहा ।

साधु उसे रोज उपदेश दिया करता—'यह ससार माया है । धन का लोभ आदमी को आदमी नही रहने देता, जितना धन बढता है लोभ उसके साथ बढता जाता है । सच्चा सुख धन का त्याग करने मे है इस माया-मोह से उठकर भगवान के चरणो मे ध्यान लगाने मे है । सोना तो मिट्टी है और मिट्टी का मोह पालकर आज तक किसी ने शान्ति नही पायी ।' धीरे-धीरे साधु के उपदेशो का प्रभाव सेठ पर पडने लगा ।

एक दिन साधु ने देखा कि घोडो-ऊट और बैलगाडियो का झुण्ड उसकी कुटी की तरफ चला आ रहा है । मन मे सदेह हुआ कि कही लोगो को उसकी असलियत तो पता नही चल गयी और ये सरकार के आदमी उसे पकडने चले आ रहे है । वह अभी यह सब सोच ही रहा था कि देखा कि उस झुण्ड के आगे आगे वही सेठ है । सेठ पास आया । उसने साधु को प्रणाम किया गाडियो-घोडो, ऊटो, से सोने-चाँदी के गहनो, मुहरो, और हीरे-जवाहरो से भरे कलसे उतारे गये । देखते-देखते कुटी के सामने ढेर लग गया । सेठ ने साधु के चरण पकडकर कहा — 'महा-राज आपके उपदेशो से मुझे सच्चा ज्ञान प्राप्त हो गया है और इस ससार से मेरा मन फिर गया है । झूठ-कपट से मैंने जो धन कमाया है वह सब मैं आपके चरणो मे रख रहा हू । इसका जो भी आप चाहे

करें—'गरीबो मे बाट दें या मदिर बनवा दे। मुझे अपना शिष्य बना ले।'

गभीर होकर साधु ने उत्तर दिया—'जिस धन को मैं तुझे त्यागने को उपदेश देता रहा हू, तू उसकी माया मे मुझे क्यो फँसाता है ? जो तेरे लिए मिट्टी है, वह मेरे लिए मिट्टी तो और भी पहले है। मैं इसमे हाथ नही लगा सकता।' और सचमुच उसने धन नही लिया। समझा-बुझाकर सेठ को लौटा दिया। महात्मा की इस महानता से सेठ की आँखो मे आँसू आ गये।

अगले दिन जब सेठ आया तो उसने देखा कि साधु का कही पता नही है। इधर-उधर खोजा, कही भी कोई नही था। इतने मे ही किसी ने आकर उसके चरण पकड लिये—'सेठ, मेरा इनाम दे।'

'कैसा इनाम ? तू कौन है ?' सेठ ने आश्चर्य से उस व्यक्ति को देखकर पूछा।

'कसूर माफ करना सेठ जी, मैं वही कल वाला महात्मा हूँ। मैं साधु-वाधु कुछ नही, आपका सेवक बहुरूपिया हूँ। जब आप जैसे चतुर आदमी को मैंने धोखा दे दिया तो मुझे अपनी कला का बहुत बडा इनाम मिलना चाहिए।' अपराधी के भाव से बहुरूपिया सिर झुकाये खडा था।

सेठ आश्चर्य के मारे आसमान से गिरा। फिर सभलकर बोला—'इनाम तो मैं तुझे दूँगा। सचमुच तूने अपने काम मे कमाल कर दिया। लेकिन एक बात बता। कल जब मैं अपनी सारी सम्पत्ति तेरे पास ले आया था तो तूने उसे क्यो नही स्वीकार किया ? अगर तू उसे ले लेता तो आज तू सेठ होता। तुझे इस तरह इनाम माँगने की क्या जरूरत रहती ?'

बहुरूपिया नम्रता से बोला—'सेठजी, यह बात मेरे मन मे भी आयी थी। उस समय सारी सम्पत्ति लेकर आज मैं कही का कही जा

सकता था। फिर मेरे मन ने कहा कि यह गलत है। मैं ससार-त्यागी महात्मा का रूप धारण किये हुए हूँ, अगर ऐसा काम करूगा तो रूप मे खोट आ जायेगा। रूप को सच्चा रखने के लिए यही उचित है कि मैं इस सम्पत्ति को त्याग दूँ। सो सच्चे महात्मा की तरह मैंने उसे त्याग दिया तो लगा कि अब मेरा काम पूरा हो गया। अब आप जो इनाम मुझे देगे, खुशी से ले लूगा।'

'और मेरी सेठानी की बीमारी ?' सेठ ने पूछा।

'उसमे भी मेरा कुछ नही है। वह तो आपका और सेठानी का विश्वास और सयोग था।'

सेठ की समझ मे सचमुच नही आ रहा था कि कैसा यह बहुरूपिया है जो करोडो की सम्पत्ति छोडकर दो-चार अशर्फियो के इनाम पर इतना प्रसन्न और सन्तुष्ट है।

●●

# अन्धा शिल्पी और आँखों वाली राजकुमारी

मैं एक ऐसे आदमी को जानता हूँ, जिसका अभी-अभी पतन हुआ है। पतन हुआ है, जैसे शिव का हुआ, शुकदेव का हुआ, विश्वामित्र का हुआ पेफ्नाशस् और कुमारगिरि का हुआ। अन्तर केवल इतना है कि वे सब महान् थे और यह एक निहायत ही तुच्छ, अन्धा शिल्पी था, लेकिन उसका पतन इतना महान् है कि मुझे उसकी तुलना मे इन सब मे से कोई नही दिखाई देता।

नरसिंहम् अन्धा था, लेकिन उसके हाथ मे जादू था। वह एक राज का बेटा था। बचपन मे एक बार उसने खेलते-खेलते अपने घनिष्ट मित्र मोती कुत्ते को टटोल-टटोल कर उसके बैठने के एक विशेष ढग को हृदयगम कर लिया और छेनी-हथौडा लेकर एक पत्थर के टुकडे को खोटने लगा। हर बार वह मोती के शरीर को टटोल लेता और फिर पत्थर की पर्तें उतारने लगता। जब उसने अपना काम खत्म किया तो उसके साथी प्रसन्नता से उछल पडे। सदाशिवम् ने तो उत्साह से उसे छाती से लगा लिया, 'नरसिंहम्, तूने तो बिलकुल ही मोती बना दिया। तूने यह कला कब सीखी, रे ?' फिर जैसे प्रशसा की, 'एक-एक ढग बिलकुल उस जैसा बना दिया, तू तो बहुत बडा कलाकार है। देखा,

कैसा मोती बना दिया है।' नरसिंहम् ने भावविह्वल हाथ अपनी उस कृति पर फेरा। उसके होठ फडक कर रह गये। आँखो मे आँसू छलक आये। काश, वह अपनी कृति देख पाता।

और धीरे-धीरे यह बात फैलने लगी कि नरसिंहम् केवल हाथ से टटोल कर स्त्री-पुरुषो की विभिन्न मुद्राए ही पत्थर मे नही उतार देता, हृदय के गम्भीर भाव भी ज्यो के त्यो अकित कर देता है। ऐसा है वह शिल्पी! लोग उसकी बनायी कृतियो और अकित भावो की गहराई को उच्छ्वासित हृदय से देखते और उसकी इस विचित्र प्रतिभा पर चकित हो जाते। कहने को कोई शब्द न पाते। लोग कहते, 'हृदय के गभीर से गभीर और गूढ से गूढ भाव उसकी अन्धी उँगलियो पर हैं—जिस भाव को चाहता है उसे मूर्त कर देता है।' दर्शक एक अद्भुत आश्चर्य से उसे देखता हुआ किसी अतीन्द्रिय लोक मे खो जाता, लेकिन नरसिंहम् था कि एक गहरी साँस लेकर चुप हो रहता। वह स्वय देख पाने मे असमर्थ था कि उसने ऐसा क्या-कुछ बना दिया है, जिसकी लोग यो तारीफ करते है। काश, भगवान उसे एक क्षण को ही आँखे दे देते, तो वह अपनी कृतियो की केवल उस बात को देख लेता, जिस पर लोग मुग्ध है!

वह अपनी कृतियो के ही हास्य-रुदन, रास-विलास इत्यादि भाव अकित करने मे इतना लीन रहता, कि लोग उन्ही मे उलझे रह जाते। वे उसे कोई सिद्ध और दिव्य-दृष्टि-सम्पन्न व्यक्ति समझते, जिसके हाथ के इशारो पर भावो का खजाना रखा हो कि जब जो चाहे भाव सामने ले आये। प्राय लोग इस बात को बिलकुल ही भूल चुके थे कि जिस सौन्दर्य या जिन भावनाओ को नरसिंहम् अकित करता है, उन सबका निवास स्थान उसका हृदय ही है, वह भी रोता, खाता, हँसता और अन्य भाव अनुभव करता होगा। पता नही, क्यो वे उसे उन सभी भावनाओ से ऊंचा समझने लगे थे और यह बात इतनी बार नरसिंहम् के सामने

कही गयी थी कि वह खुद भी अपने को इस सबसे अलग समझने लगा था। उसके हृदय मे भी कोई भाव उठते हैं, इस बात को महत्त्व देना उसने बन्द कर दिया था।

यही कारण था कि जब वह अपनी मूर्ति बनवाने वाली धनी-मानी महिलाओ, राजकुमारियो या अन्य नवयुवतियो के अग-प्रत्यग को अपनी अभ्यस्त उँगलियो से टटोलता तो उसकी उँगलियाँ इतनी निस्पन्द, भावना-विहीन रहती जैसे वह किसी निर्जीव कपडे की पुतली को टटोल रहा हो। उसे कभी ज़रा भी कोई झिझक नही होती। उसकी उँगलियाँ ज़रा भी नही काँपती—उसके हृदय मे एक भी धडकन नही होती। उसके लिए यह सब बिलकुल नया नही रह गया था। शायद वह पेड की डाल और युवती की गर्दन को समान निष्ठा और भाव से टटोल सकता था, बिलकुल जैसे अभ्यस्त मछुए को सुन्दर से सुन्दर मछली नही लुभा पाती—वह निश्चित उँगलियो से उसे टटोलता है, अपने लाभ-हानि का अनुमान लगाता है और उसे एक और ढेर मे फेक देता है। शायद उसके मॉडलो ने भी उसके द्वारा टटोले जाने पर किसी भाव को अनुभव करना छोड दिया था।

ऐसा था वह अद्भुत शिल्पी नरसिंहम्!

एक बार उसके सामने विचित्र सकट आ खडा हुआ, जो उसके पतन का कारण था।

उसकी कीर्ति सुनी राजकुमारी नन्दा ने। रूप और सौन्दर्य की पुतली नन्दा का यश सागर की लहरो, पहाडो की दीवारो और खेतो के पार फैला हुआ था। शायद उस काल मे कोई भी ऐसा नही था, जो उसके रूप के विषय मे न सुन चुका हो। उसके यश का एक और बहुत बडा कारण यह भी था कि वह बहुत कम आयु मे ही समस्त विद्याओ का अध्ययन कर चुकी थी, तथा जीवन और जगत् के रहस्य-सम्बन्धी सभी दर्शनो और ज्ञान-विज्ञान में पारगत हो गयी थी। इससे जहाँ एक ओर

उसमे वस्तु को भेद जाने वाली तीव्र मेधा का विकास हुआ—वही इस सब दृश्य-जगत की निस्सारता उससे छिपी न रह सकी । इस क्षणभगुरता ने उसे कुछ इतना विरक्त और वीतराग बना दिया कि जीवन और जगत की किसी भी वस्तु मे वह रुचि ही नही ले पाती थी । उसे लगता था कि यह सब तो व्यर्थ है, निस्सार है, क्षणिक है । इस सब का परिणाम यह हुआ कि पिता लाख प्रयत्न करने पर भी उसे विवाह के लिए राजी नही कर सके । साम और भेद सभी उपाय काम मे लाये गये, लेकिन राजकुमारी ने स्पष्ट कह दिया कि उसे इस ससार मे कोई रुचि नही है । जो बालू की भीत की तरह अस्थिर और अचिर हो, उसमे वह अपने को क्यो बाँधे ? क्यो न उस लहर की खोज मे अपना जीवन बिता दे जो असख्य बालू की भीतो को एक स्पर्श मे गला डालती है । हार कर पिता ने आग्रह छोड दिया और राजकुमारी, इस नश्वरता, के पार अमरता खोजने मे, इस अधकार के पार प्रकाश खोजने मे इस 'असत्' के पार 'सत्' खोजने मे लग गयी । वन, पर्वत, मैदान, नदी, समुद्र सभी जगह वह घूमी , उसकी खोज जारी रही । वह इस खोज के पथ पर अपने लक्ष्य के निकट पहुँच रही है या दूर, यह तो वह नही जानती, लेकिन वह देखती—दिन का सुनहला शृगार उसके माथे का टीका, घुधला पड जाता है—सूरज परकटे पक्षी की तरह पश्चिम के तट पर पडा कराह-कराह कर दम तोड देता है, और अधकार का कफन उसे निगल जाता है । चाँद के सौन्दर्य को प्रकाश के दैत्य कुचल डालते है, फूल की हँसी को धूल का अट्टहास खा जाता है—और जीवन की चह-चहाती मस्ती, पता नही मृत्यु के किन अदृश्य हाथो द्वारा मसल कर फेंक दी जाती है । वह, यह सब देख कर व्यथित हो उठती और उसकी आँखो मे आँसू छलछला आते । वह मरघटो मे जाती और घटो सूनी आँखो से चिताओ की उठती-गिरती लपटो को देखा करती । मृत व्यक्तियो के सगे-सम्बन्धियो का क्रन्दन उसकी छाती फाड देता और वह स्वय फूट-फूट कर रो उठती । वह किसी वृद्ध के झुर्रीदार चेहरे और निस्तेज आँखो को देखती और मुँह फेर लेती—उसकी विवशता उसे

व्याकुल बना देती—'देखो, बेचारा किस तरह धीरे-धीरे मृत्यु की ओर घिसट रहा है, जैसे अनजान शिकारियो का झुड अपने शिकार को धीरे-धीरे कोने मे घेर रहा हो। बेचारा खुद नही जानता कि इससे कैसे बचे!' हँसते किलकते बालको को देख कर वह करुणा से अभिभूत हो उठती—'आह, कितना सरल शुभ्र और निष्पाप सौन्दर्य! कौन है निर्दयी, जो इसको अपने फौलादी पाँवो से कुचल डालता है!'

जितना ही नन्दा अपनी खोज मे लगी चली गयी, उसके हृदय की व्यथा रात-दिन बढती गयी। मरते हुए व्यक्ति के सिरहाने बैठ कर वह अपलक दृष्टि से उसे देखती रहती। देखती रहती उसकी बुझती आँखो को, उसकी ठडी पडती देह को, उसकी बद होती धडकनो को। एक प्रश्न था कि उसकी नस-नस मे, रग-रग मे हथौडे मारता—कौन है, जो इसे यो लिये चला जा रहा है?—कौन है, जो इस जीविनी-शक्ति को यो सामने-ही-सामने पी रहा है? और जब एक झटके से सब समाप्त हो जाता, तो वह एक गहरी साँस लेकर सिर झुका लेती। उसे ऐसा लगता जैसे समस्या का हल था, प्रश्न का उत्तर था कि जो समझ की पकड मे आते-आते झटके से टूट कर न जाने कहाँ गायब हो गया—जैसे कोई बच्चे को बहकाने के लिए रस्सी को धीरे-धीरे सरकाए—सरकाता चला जाए और जब देखे, कि वह पकड मे आने को ही है तभी झटके से पूरी रस्सी को खीच ले। लेकिन लेकिन आखिर हल जाएगा कहाँ? प्रश्न है तो उसका उत्तर भी होगा ही—बिना उत्तर का कोई प्रश्न नही होता—बिना समाधान के कोई शका नही होती। उस समाधान और उत्तर को हम खोज पाएँ या न खोज पाएँ, लेकिन वह होता अवश्य है। और इस तर्क से प्रेरित हो कर राजकुमारी और भी उत्साह से अपनी खोज मे लग जाती। आखिर वह हल, वह उत्तर, वह समाधान कही न-कही तो होगे ही। सबसे अधिक पीडा देती थी उसे यह समस्या, कि इतने वर्ष हो गये सृष्टि को—यह नाश का क्रम इतने अनवरत रूप से चल आ रहा है, लेकिन क्या कभी किसी के भी सामने यह प्रश्न इतनी

तीव्रता से नही उठा, जितनी तीव्रता से यह उसे व्याकुल किये हुए है ? तभी उसके सामने सैकडो मनीषियो के नाम और मूर्तियाँ स्पष्ट होने लगती, जिन्होने अपना जीवन इसी खोज मे उत्सर्ग कर दिया था। तो फिर क्या यह उत्तर उनकी उँगलियो से भी जरा-ज़रा भागता रहा है ? आखिर यह उत्तर कब तक यो भागता रहेगा ? क्या यह कभी पकड मे नही आएगा ? क्यो हमारी सैकडो पीढियो के लोग नही पकड पाये इसे ? यही 'क्यो' था जो कभी-कभी आस्था की जडे हिला देता था, तब उसकी इच्छा होती कि वह उन्मत्त और उद्भ्रात की तरह सारी दुनिया मे भागती फिरे।

अपने सारे रग-बिरगे वैभव को लेकर उसके जीवन मे अठ्ठाईस बसन्त आये और चले गये। कौन है, जो इन बसन्तो की श्री को दो-तीन मास बाद ही झाड-पोछ कर साफ कर देता है ? यह प्रश्नात्मक अन्तर्दृष्टि उसे इनके भुलावे से बचाती रही। लेकिन पता नही क्यो, हर बसन्त आ कर अनजाने मे उसके चेहरे पर केसर और गुलाब मल देता। मुख पर शोभित कुँमकुम का लावण्य और पराग की माधुरी उसके हृदय मे जलती, इस तीव्र ज्योति से इस प्रकार झिलमिलाया करती जैसे नन्दा का शरीर केवल एक फानूस हो, और उसके भीतर जलने वाली दीप-शिखा ही उसे यह अथाह और अलौकिक सौन्दर्य दे रही हो। एक विचित्र ज्योतिर्मण्डल उसके चेहरे के चारो ओर उद्भासित दिखाई देता। यो उसके सौन्दर्य की चर्चा दूर-दूर तक फैलती गयी।

लेकिन उस समय नरसिहम् वास्तव मे बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो उठा, जब एक मधुर, कोमल, नरम किन्तु आत्म-विश्वास-युक्त कण्ठ से निकला हुआ वाक्य उसने अपने बहुत पास ही सुना—'शिल्पी नरसिहम्, तुम्हारी कला की कीर्ति मुझे बहुत दूर से खीच कर लायी है।'

नरसिहम् के लिए यह वाक्य नया नही था, लेकिन वह चौक उठा। दोपहर के समय, झरने के किनारे एकान्त मे बैठा वह चिन्तन कर रहा

था। सँभल कर उसने कहा—'आपके कष्ट के लिये मेरी सहानुभूति और धन्यवाद प्रस्तुत है।'

'मेरा नाम नन्दा है मैं . व राज्य '

राजकुमारी की बात काट कर घबराये स्वर मे शिल्पी ने पूछा—'क्या राजकुमारी नन्दा मेरे सामने खडी है ? ' उसकी अन्धी आँखो पर पलके बडी तेज़ी से उठी और गिरी। उसने स्वय उठने का प्रयत्न किया।

'नही नही नरसिहम्, तुम बैठे रहो, मुझे राजकुमारी कहना गलत लगता है। एक नश्वर प्राणी, जिसकी स्थिति के क्षण कोई नही गिन सका, क्या राजकुमारी और क्या भिखारिणी ?' नन्दा दया से अभिभूत हो उठी। उसने पेडो के नीचे पडी, बनी अधबनी सैंकडो मूर्तियों को विभिन्न मुद्राओं मे देखा। और जब इन प्रयत्नो की प्रत्येक भगिमा से हृदय के विभिन्न भावो की अभिव्यजना देखी, तो एक अद्भुत आश्चर्य से वह पुलक उठी। यह अन्धा, यह सब कैसे बना लेता है ? इसे क्या मालूम कि मुसकान मुख पर कैसे अभिव्यक्त होती है ?

'राजकुमारी, मैंने आपके ज्ञान और रूप की बहुत चर्चा सुनी है, लेकिन क्या करूँ ? मैं एक राज का बेटा हूँ, मूर्ख और नासमझ, आपके ज्ञान को समझ नही सकता, और और रूप को देखने लायक भगवान् ने रखा नही है...' कृतज्ञता के बोझ से झुक कर नरसिहम् बोला।

हज़ारो की भीड मे अपनी त्वचा पर अनगिनत दृष्टियो का पीपासित स्पर्श अनुभव करते हुए भी नन्दा ने कभी झिझक और लज्जा का अनुभव नही किया था, लेकिन तब न जाने क्यो हल्की लज्जा की लहर उसके सारे शरीर को रोमाचित कर गयी। उसके पास ऐसा आखिर क्या है, जिसे देख कर यह अन्धा अपने को सफल मानता और केवल उसे ही न देख पाने का उसे इतना दुख है ?

'राजकुमारी, इतने वर्ष हो गये, अपनी आँखें न होने का शायद

मुझे कभी इतना दुख न हुआ, जितना मैं आज अनुभव ' नरसिहम् कह रहा था ।

'लेकिन नरसिहम्, मुझमे तो कोई बात ऐसी नही है, जिसके लिए तुम यो दु ख कर रहे हो । जैसे सब होते हैं, वैसे ही मै भी हूँ—' लेकिन राजकुमारी जानती थी कि जैसे सब होते है, वैसी ही वह नही है ।

'राजकुमारी, मैं तो मान लेता, पर लोग जो इतना सब कुछ कहते हैं उसे कैसे झुठलाया जाए ? मै तो स्वय ही नही जानता कि सब कैसे होते हैं, और आप कैसे उन जैसी या उनसे अलग हैं । मेरे लिए तो सब बराबर हैं, फिर भी लोगो की प्रशसा से तो यही लगता है कि आप सब जैसी नही हैं, आपमे कुछ ज़रूर ऐसा असाधारण है जो सबके पास नही है ।' नरसिहम् ने गम्भीर स्वर मे उत्तर दिया ।

'असाधारण हो या साधारण, लेकिन नरसिहम्, लोग यह क्यो भूल जाते है कि वह सब कुछ ही क्षणो का है ? मुझे तो सच ही, बडा दु ख होता है, जब इतनी अधिक नश्वर चीज के पीछे लोगो को इस तरह भागते देखती हूँ । इस नश्वरता का परिचय लोग हर क्षण पाते रहते है, फिर भी क्यो ये ऐसा पागलपन करते हैं ?' राजकुमारी नरसिहम् के पास बैठ गयी थी । इस वाक्य के साथ ही एक-बार फिर उसे बडी झेप लगी—यह कैसा प्रश्न वह किस व्यक्ति से कह रही है ? उस व्यक्ति से जो स्वय स्वीकार कर चुका है कि वह इस तरह की किसी भी बात को नहीं समझता ।

नरसिहम् बोल रहा था—'राजकुमारी, और अधिक गहरी बाते तो आप स्वय समझती होगी, आप विदुषी है, लेकिन मेरी समझ मे तो यही आता है कि शायद इसकी नश्वरता ही लोगो को आकर्षित करती है । किसी भी असाधारण, अपरूप वस्तु की ओर लोग शायद इसीलिए दौडते हैं कि वह नश्वर है और नश्वर है तो शीघ्र ही चली भी जाएगी । उसके चले जाने से पहले ही हर व्यक्ति उसको देख लेना चाहता है कि देखें तो सही कैसी असाधारण वह चीज़ है । कोई साधारण मेला-तमाशा

एक दो दिन के लिए हमारे नगर मे आता है तो लोग झुण्ड-के-झुण्ड दौड पडते है ।'

'फिर भी वे उस जाने वाली चीज़ को रोक तो नही सकते न ?' नन्दा का प्रश्न फिर उसके हृदय की व्यथा बन गया ।

'रोक न सकना कोई अपराध तो नही है—वह बेबसी है । इसके कारण यदि अवसर मिले तो, या अवसर प्राप्त करके भी, उसे देखने से ही क्यो वचित रहा जाए ?'

'यही तो मैं जानना चाहती हूँ नरसिहम्, यह बेबसी क्यो है ?' बेसब्री से नन्दा ने कहा । वह भूल गयी कि किससे बात कर रही है ।

'राजकुमारी, इन सब बातो को मैं नही जानता । आपका ज्ञानकोष विशाल है, आप अपने को अनेक प्रश्नो मे उलझा लेती है । मैं तो सचमुच आज अनुभव करता हूँ कि दो मिनट को ही मुझे आँखे मिल जाती' फिर ज़रा वह झिझक कर बोला—'राजकुमारी, मैंने आपके यहाँ कष्ट करने का कारण नही पूछा, और मिलते ही हम लोग बहस मे पड गये ।'

राजकुमारी ने अनुभव किया कि यह अधा जीवन और जगत् के भेद को चाहे न समझता हो, लेकिन बात समझदारी की करता है । उसने उत्तर दिया, 'जब मैं घूमती हुई इधर आयी, तो तुम्हारा यश सुना । बिना देखे भी तुम रूप और भावो को यो साकार कर देते हो, तो स्वाभाविक जिज्ञासा हुई । और मैं कह सकती हूँ कि तुम्हे जैसा सुना था वैसा ही पाया ।'

जब आपने यहाँ तक आने का कष्ट किया है, तो क्या थोडा कष्ट और नही कर सकेंगी ?' नरसिहम् ने बहुत सकोच से पूछा ।

'क्या ?'

'मैं आपकी मूर्ति बनाना चाहता हूँ ।' आँखें झुकाए हुए ही वह बोला ।

'फिर वही बात ?' नन्दा के मुख पर मुसकान आ गयी, शिल्पी के आग्रह पर। उसने पूछा, 'लाभ क्या है ? मूर्ति बना कर क्या करोगे तुम ?'

'यह तो मै नही जानता ' नरसिंहम् वास्तव मे अपने इस उत्तर पर चौक गया। मूर्ति बना कर वह क्या करेगा - क्या करता आ रहा है यह वह नही जानता। थोडी देर चुप रह कर उसने उत्तर दिया, 'और तो मै कुछ नही जानता, लेकिन आगे आने वाले लोगो के लिए मैं उस असाधारण रूप को सुरक्षित अवश्य कर जाऊँगा।'

उसके रूप की नश्वरता केवल उसके शरीर के साथ ही नही है— जैसा कि वह समझती है, इस भावना से राजकुमारी को थोडा सतोष मिला। वह गम्भीरता से बोली, 'अच्छा, नरसिहम्, मुझे आज के दिन इस विषय पर सोच लेने दो।'

और अन्य साधारण बातचीत के पश्चात् नन्दा अपने निवास स्थान पर लौट आयी। वह दिन-भर सोचती रही, उस विचित्र शिल्पी की बात। उसके रूप को वह अमरता देने जा रहा है। उसके हाथो मे जादू है। निश्चय ही वह उसे विश्व के कला-इतिहास मे एक स्थायी निधि बना देगा। उसकी आँखो मे विशाल कमरा नाच उठा — जिसमे सैकडो विभिन्न आकार और मुद्रा वाली मूर्तियाँ सजी हुई रखी है। स्थान-स्थान पर दीपाधार और झाड लटक रहे है, और प्रकाश से कमरा जग-मगा रहा है। हजारो दर्शको की भीड उस कमरे मे रखी मूर्तियो को देख रही है, उनमे सामने बिलकुल बीच मे रखी है, राजकुमारी नन्दा की प्रतिमा हर दर्शक वहाँ तक जाता है, और उस अपरूपता सौन्दर्य की मोहिनी मे बँध कर चकित-सा उसे देखता रह जाता है। समय की धार खिसकती जाती है, लेकिन वह प्रतिमा वही रखी है उसका रूप अमर

हो जाएगा ! और जब वह अनजाने ही शीशे के सामने मुग्ध अपने आप को देख रही थी, तभी जैसे किसी ने कहा, 'लेकिन मेरे भीतर निरन्तर सुलगती वह जिज्ञासा—यह प्रश्न—यह ज्ञान ?'

दूसरे दिन उसने नरसिंहम् से कहा—'नरसिहम्, मुझे कोई आपत्ति नही है, लेकिन मै एक बात जानना चाहूँगी—जानना क्या, एक शर्त रखना चाहूँगी।'

'क्या ?' पहली बात से प्रसन्न, दूसरी से चिन्तित हो कर नरसिंहम् ने पूछा।

'तुम केवल मेरे रूप को ही तो बनाओगे न, लेकिन मेरे भीतर जो ये प्रश्न निरन्तर सुलग रहे हैं, इनका क्या हो ?' नन्दा बिलकुल ऐसी तटस्थता से कह रही थी, जैसे वह किसी तीसरे आदमी के विषय मे बाते कर रही हो—'लोगो का कहना यह है कि मेरे भीतर निरन्तर जलती ज्ञान की वह शिखा ही इस रूप को सतगुणित आभा दे रही है। उसके बिना क्या मेरा रूप बिलकुल निर्जीव नही होगा ?'

नरसिंहम् चिन्ता मे पड गया। उसने उत्तर दिया, 'राजकुमारी, मैंने बताया कि ज्ञान और रूप दोनो को ही मैं नही समझ सकता, देख नहीं सकता। मेरे पास हाथ हैं, और हृदय है—आँखे नही हैं। हाथ से मैं रूप को स्पर्श करता हूँ, और हृदय से उसे अनुभव करता हूँ. बस यही मेरी सीमाएँ है। जो मेरे स्पर्श मे आ जाता है वही मेरे अनुभव का भाग भी बन जाता है, तब उसे तो साकार कर ही सकता हूँ। क्या आपके ज्ञान को मैं स्पर्श कर सकूँगा ?'

राजकुमारी ने उत्तर के इन शब्दो मे तो बात नही सोची थी, लेकिन जिस उत्तर की उसने आशा की थी, उसमे कुछ इसी अर्थ की आशका थी। वह उदास स्वर मे बोली—'यही तो कठिनाई है नरसिंहम् वह स्पर्श की वस्तु तो है ही नही, स्वाद श्रवण और घ्राण की भी वस्तु नहीं है—शायद बहुतो को तो दिखाई भी न दे...'

'तब ? ..तब तो बडा कठिन है।' नरसिहम् हताश हो गया। वह सोचता रहा' सोचता रहा—फिर उसने पूछा, 'उसे आप अपने रूप की किसी भी भगिमा या मुद्रा द्वारा आकार नही दे सकती ?'

यह और भी कठिन प्रश्न था। राजकुमारी एकदम इस प्रश्न का उत्तर नही दे सकी। तरह-तरह की हजारो मुद्राएँ और भगिमाएँ, उसके मस्तिष्क मे चक्कर लगा गयी, लेकिन उसे लगा कि जो कुछ वह चाहती है। उसे कोई भगिमा अभिव्यक्त नही कर पाती। बहुत सोच-विचार के बाद उसने कहा, 'पद्मासन लगाये, ध्यानस्थ योगी की मुद्रा ही मुझे इन सबमे अच्छी लगती है। मुख पर गम्भीर स्निग्ध-शान्ति का भाव, बन्द आँखे।'

'किन्तु, राजकुमारी, शका क्षमा करे।' नरसिहम् बात काट कर बोला—'यह तो कोई भगिमा या मुद्रा नही हुई। इस मुद्रा को तो शायद बडे से-बडा मूर्ख और ढोगी भी धारण कर सकता है। मुझे तो केवल आपकी ही असाधारण अभिव्यक्ति करने वाली मुद्रा चाहिए, तभी तो मैं आपको आश्वासन दे सकूँगा।'

राजकुमारी जैसे अपनी विवशता मे मचल उठी। क्या सचमुच कोई ऐसी मुद्रा या भगिमा नही है, जो रूप को साथ अभिव्यक्त करके वह इस अन्धे शिल्पी को हृदयगम करा दे ? ठीक तो है, इस पद्मासन वाली मुद्रा को तो हर मूर्ख और ढोगी धारण कर सकता है। इससे यह कहाँ पता चलता है कि जीवन और जगत् के रहस्यो के खोज मे यह व्यक्ति कहाँ तक बढ चुका है ? या इसके हृदय मे उठने वाले प्रश्नो मे वेग और आवेग कितना है ? तो फिर तो फिर . ?

'नरसिहम्, मैं किसी ऐसी मुद्रा या भगिमा को नही जानती, जिससे मेरी, केवल मेरी, असाधारणता अभिव्यक्ति हो सके।' राजकुमारी रुआँसी हो आयी। उसे लगा कि कला के रूप मे उसने इस नश्वरता को जीतने का हथियार पा लिया है, और अपने हृदय मे सुलगते प्रश्नो का एक समाधान, एक शाति, वह दे सकेगी, जो आज तक कोई खोजी नही दे सका।

'तो फिर ?' नरसिंहम् के इस 'तो फिर' मे ऐसी निराशा थी कि अंधे को यो निराश करने के कारण नन्दा व्यथित हो उठी। उसने कहा—'तो फिर, मै क्या करूँ, तुम्ही बताओ ?'

'नन्दा !' नरसिहम् नन्दा के कन्धे पर सरल आग्रह का हाथ रख कर बोला—'मुझे केवल रूप की असाधारणता को अमर कर लेने दो, तुम्हारे ज्ञान की असाधारणता को शायद कोई और अमर कर सके।'

'मुझे तुम्हारी अभ्यस्त कला पर विश्वास है। तुम रूप की असाधारणता को अमर कर दोगे, इसमे मुझे ज़रा भी सन्देह नही, लेकिन ज्ञान की असाधारणता को अमरता मे बाँधने वाला मुझे कौन, कहाँ, मिलेगा ? यह ज्ञान इतना सूक्ष्म क्यो है ? क्या मेरे अठ्ठाईस वर्षो के ज्ञान की साधना तपस्या यो ही गयी ? कोई भी इसे समझ नही पाएगा ? मेरी इस व्याकुलता को कोई भी वाणी देकर आने वाले लोगो को यह नही बताएगा कि जीवन और जगत की रहस्य-समस्याओ से मैं कितनी आन्दोलित और मथित रहती थी ?' नन्दा रो पडी। इतनी बेचैन और व्याकुल शायद वह कभी नही हुई थी।

उसके कधे पर रखे हाथ से उसे हल्के थपथपा कर नरसिहम् बोला, 'नन्दा, ससार बहुत बडा है। यो व्याकुल क्यो होती हो ? शायद कोई और तुम्हारी तपस्या को समझ सके। मैं ज्ञानी नही हूँ, ज्ञान को नही समझता, लेकिन शायद तुम्हारी व्याकुलता को समझ सकता हूँ। मुझे तुम अपने इसी रूप को साकार करने दो।'

नन्दा ने कुछ नही कहा। लेकिन उसे लगा जैसे वह बीच से दो टुकडे हो गयी, कोई दृढता उसके मन मे थी, जो कि टूट कर बिखर गयी है। आज तक उसने ज्ञान को आगे रखा था, और रूप को झुठलाया था। आज उसे लगा कि उसने रूप के महत्त्व को स्वीकार किया है, और ज्ञान को पीछे कर दिया है। उसकी साधना ? अठ्ठाईस वर्ष तक यह रूप की उपेक्षा ! वह क्या करे ..?

और दूसरे दिन जब नरसिंहम् ने आवश्यक मिट्टी सामने रख कर उसे बैठाया तो वह बडा अजब-अजब अनुभव कर रही थी। आज उसका रूप अमर होने जा रहा था। उसके मन मे ऐसा एक दु ख था, जैसे परीक्षार्थी जिस प्रश्न को सबसे अधिक तैयार करे, उसकी ही उपेक्षा की जाए।

जब नरसिंहम् ने उसकी सुन्दर उँगलियो, हथेली, कलाई और बाँहो को अपने अभ्यस्त हाथो से टटोला तो उसे लगा जैसे वह एकदम किसी नयी वस्तु को टटोल रहा है, या शायद जिंदगी मे पहली बार ही वह मूर्ति बनाने बैठा है। मन मे उठती बात को दो एक बार दबाकर उसने बडे झिझकते स्वर मे कहा, 'राजकुमारी, यदि आप बुरा न माने तो एक बात कहूँ।'

'क्या ?' नन्दा चुपचाप शिल्पी की हर चेष्टा का अध्ययन कर रही थी। उसने उसके दो-एक बार फडकते होठो को भी देखा था—वह कुछ कहना चाहता है, यह उसे लग रहा था।

'अपने इस कलाकार के जीवन को मुझे लगभग बीस वर्ष होने आये। हजारो ही नारियो की मूर्तियाँ मैंने बनायी। उनके अगो की गठन का मैंने अध्ययन किया लेकिन ऐसा विचित्र हाथ मैंने किसी का नही देखा।

'कैसा ?' कौतूहल से नन्दा ने पूछा।

'इतना सानुपातिक, इतनी सुन्दर गठन, और आप विश्वास करेगी यदि मैं यह कहूँ कि अपने हर आधार (मॉडल) को स्पर्श करते समय मेरे हाथ, मन सभी कुछ बिलकुल निस्पन्द रहे है, लेकिन.. लेकिन इस हाथ का स्पर्श बडा सुखदायक लगता है।' नन्दा पर अपने शब्दो की प्रतिक्रिया का अनुमान वह अपलक आँखे खोलकर ही करना चाहता था।

राजकुमारी का सारा शरीर रोमाचित हो आया। खून की एक लहर कनपटी पर दौड़ गयी। उसने फौरन ही अपना हाथ झटके

से खीच लिया। अपने रूप और सौन्दर्य की प्रशसा उसने अनगिनत बार सुनी थी। लेकिन सामने बैठे इस अन्धे शिल्पी की—निश्चित रूप से जो उसे देख भी नही सकता—इस प्रशसा मे ऐसा क्या है, जिसने उसे यो अस्थिर बना दिया है ? नन्दा ने जब इसका विश्लेषण किया, तो पाया कि केवल रूप तक जाने की इसकी विवशता ही यह मूल कारण है। 'क्या सचमुच इस रूप के पार तुम किसी दूसरी चीज़ का अनुमान नही लगा सकते, नरसिंहम् ? क्या तुम मेरी आत्मा के सौन्दर्य को ज़रा भी नही देख सकोगे ?'

'यह मेरी सीमा है, विवशता।' उसके स्वर मे निश्छल व्यथा थी।

नन्दा ने एक गहरी साँस ली और कहा, 'अच्छा नरसिंहम्, आज मेरी मन स्थिति ठीक नही है, शेष कल।' और वह चली आयी। नरसिंहम् बैठा सोचता रहा, 'क्या नन्दा को उसकी बात का बुरा लगा ? लेकिन उसने तो कोई ऐसी बुरी कही नही है। सत्य ही तो कहा है।'

दूसरे दिन जब वह नन्दा की बाँह, कधे और गले का स्पर्श कर रहा था, तो बार-बार उसका हाथ काँप जाता। नन्दा की त्वचा के नीचे रक्त की धडकन, जैसे उसके हाथ को पिघला-सी देती। उसे कई बार ऐसा लगा, जैसे नन्दा का शरीर रोमाचित हो आया हो। वह उस समय चुप रहा, लेकिन मिट्टी तैयार करते हुए उसने पूछा, 'सचमुच, राजकुमारी, मैं जानना चाहता हूँ—रूप के पार क्या है ?'

'रूप के पार आत्मा है !' नन्दा ने जैसे हज़ारो बार दुहराये गये शब्द कहे, 'जीवन और जगत के मूल रहस्यो—इस नाम-रूपात्मकता के जाल के परे – वास्तविकता को जानने, उसे भेद जाने की उत्कट जिज्ञासा है, उसे ग्रहण करने की आकाक्षा है। वही तो सब कुछ है।'

'फिर यह रूप और सौन्दर्य क्या है ?' नरसिंहम् ने सहज प्रश्न किया।

'रूप और सौन्दर्य वह सुनहले पर्दे है, जिनके पीछे वह छिपा है। वही तो ज्योति है, जो रूप के पर्दे को सौन्दर्य की आभा से उद्भासित

रखती है। वही दीपशिखा है, जो इसके पीछे झिलमिलाती है—जब तक वह है, तभी तक यह रूप का प्रकाश है।' नन्दा के मुख पर तेज आ गया, 'वह स्वय प्रकाश है, वह अखड है—वही चरम सत्य है ?'

नरसिंहम् ने कुछ देर बाद फिर पूछा, 'जब वह इतना समर्थ है, तो फिर यह रूप क्यो ?'

राजकुमारी थोडी अचकचा उठी, फिर भी उत्तर दिया, 'क्योकि अपनी अभिव्यक्ति का कोई माध्यम, या आधार उसे चाहिये।'

'तो क्या रूप के अतिरिक्त उसके पास कोई आधार नही है ?' नरसिंहम् काम छोडकर बैठ गया, और सरल उत्सुकता से नन्दा के मुख की ओर उसने आँखे उठा दी।

'रूप या आकार के बिना वह अपने को कैसे अभिव्यक्त कर सकता है ?' नन्दा को लगा कि उसका ज्ञान फिर एक बार पराजय की दिशा मे जा रहा है।

तो रूप या आकार के बिना उसका अस्तित्व नही है ?—नरसिंहम् ने कहा, 'सुनते हैं, शरीर के बिना प्राण प्रेत होता है। मनुष्य को त्रास और यन्त्रणा देता है। शायद आत्मा भी जब रूप के साथ है, तब पवित्र है—पूज्य है, शुभ है—इसके बाद फिर प्रेत है।'

एक गम्भीर 'हूँ' के बाद नन्दा चुप हो गयी। नरसिंहम् भी चुप रहा। फिर जैसे स्वय ही बडबडाने लगा—'मुझे तो लगता है नन्दा, शरीर और रूप के बिना आत्मा कुछ नही है। जो इतना असमर्थ और अशक्त है, कि बिना रूप के अपना अस्तित्व प्रमाणित नही कर सकता, वह सर्व-शक्तिमान और सत्य कैसे है ? सत्य और सर्व शक्तिमान तो फिर रूप हुआ न ?'

रूप ! रूप ! अन्धे, तुमने मुझे तग कर दिया।' एकदम तडप कर नन्दा बोली, 'मैं मानती हूँ कि रूप ही सत्य है फिर वह इतना अस्थिर, अचिर और नश्वर क्यो है ?' प्रश्न करने के साथ ही अपनी इस अप्रत्याशित उत्तेजना पर नन्दा लज्जित हो उठी।

एकदम नरसिहम् चौंक गया। शायद वह इस विषय पर कुछ सोचता भी, किन्तु नन्दा की उत्तेजना से सहम कर उसने उत्तर दिया —'यही सब यदि जानता होता तो नन्दा, मै भी सिद्ध हो गया होता। तुम इन सबको जानती हो, इसलिए अपनी जिज्ञासाएँ रखी, तुम्हे बुरा लगता है तो छोडो। लेकिन मे एक बात पूछता हूँ—जब रूप ही सत्य है तो इतने वर्ष तुमने उपेक्षा करके क्या सत्य के प्रति अपराध नही किया ?' नरसिहम् ने आगे बढ कर फिर नन्दा के स्वस्थ और मासल कन्धे पर हाथ रख दिया —'सत्य, और एक असाधारण सत्य को अपने पास रख कर तुमने इसको सिर्फ उपेक्षित पडे रहने के लिए इस तरह फेक दिया है। तुमने कभी नही सोचा कि यह रूप का सत्य तो हर-एक के पास है, लेकिन असाधारण सत्य तो हर-एक के पास नही है—वह तो स्पृहा की ही वस्तु है।'

'असाधारण सत्य मेरे पास है तो मैं क्या करूँ ?'

नन्दा ने वक्र-दृष्टि से अपने कन्धे पर रखे नरसिहम् के हाथ को देखा, फिर तीखी दृष्टि से उसके मुख की ओर झाँक कर बोली, 'जो उसकी असाधारणता, अपरूपता की पहचान और परख रखता है, उसे उसकी पहचान और परख का आनन्द लेने दो। सत्य की परख का आनन्द ही तो परम और चरम आनन्द है।' कधे पर रखा नरसिहम् का हाथ पसीज उठा—राजकुमारी के शरीर मे एक फुरहरी आयी, लेकिन उसने जोर से नरसिहम् का हाथ झटक दिया और उठ खडी हुई —'नीच, पतित, सीधी बात क्यो नही कहता कि वेश्या की तरह अपने रूप को हर-एक को दो, सडको पर फेको—इतना घुमा-फिरा कर क्यो दार्शनिको जैसी भाषा का आधार लेता है।'

और अत्यन्त क्रुद्ध हो नन्दा वहाँ से लौट आयी। तब बहुत देर तक निवास-स्थान पर आकर रोती रही।

नरसिहम् पहले तो एकदम चकित उजबक की तरह देखता रहा लेकिन

जब उसने दूर चली जाती नन्दा के चरणो की चाप सुनी तो एकदम सिर लटका लिया। 'पतित ! नीच' फिरकी की तरह होड बाँध कर ये शब्द उसके मस्तिष्क मे निरन्तर घूमते रहे। उसने अपनी कमजोरी को क्यो इस तरह प्रकट किया ? लेकिन वास्तव मे ही क्या यह उसका कमजोरी है ?—सत्य की परख, असाधारणत्व की पहचान, क्या कमजोरी है ? झूठ को झूठ, सत्य को सत्य, कुरूप को कुरूप, सुन्दर को सुन्दर या प्रिय को प्रिय कह देना कमज़ोरी है ? वह दिन-भर द्वद्व और पश्चाताप की आग मे जलता रहा। मानसिक ग्लानि थी कि उसे खाये जा रही थी, और उसकी नीद हराम हो गयी थी। भौहे तनी थी और आँखो मे बार-बार आँसू आ जाते थे।

लेकिन जब दूसरे दिन निश्चित समय पर उन चिर-परिचित पदो की चाप सुनी, तो चौक कर उसने सिर उठा लिया—उसकी इच्छा हो रही थी कि अपने मुँह को दोनो हाथो से ढँक ले। उसने जैसे परिस्थिति भाँपने वाली प्रश्न-दृष्टि से उधर देखा।

'नरसिंहम्, आज तो तुम ऐसे बैठे हो जैसे तुम्हे कुछ करना ही न हो।' बडे स्वाभाविक और स्निग्ध स्वर मे नन्दा ने उसके पास बैठ कर पूछा।

राजकुमारी, मेरी बातो से आपको बहुत ही कष्ट पहुँचता है, मैं क्षमा माँग लेता हूँ। आगे से इस प्रकार की कोई दुर्बलता मैं प्रकट नही करूगा, और चुप ही रहूँगा।' वह एक दीर्घ निश्वास लेकर पुन मिट्टी तैयार करने लगा।

नन्दा उसके हर अग-चालन को देखती रही। उसके मुख, उसकी आँखो और उसकी हर हरकत से वह अनुमान लगाना चाहती थी कि इस व्यक्ति के भीतर आखिर चल क्या रहा है। वह बेझिझक होकर शायद इसलिए उसे देख सकती थी कि वह जानती थी कि नरसिंहम् अधा है,

देख नही सकता। कौन-सी तडप इसके भीतर है, जो इसे चला रही है ?

कुछ ही क्षण बाद नरसिहम् के हाथ नन्दा के कपोलो, नासिका, भाल, भौहो और आँखो का स्पर्श करने लगे। अपनी सारी चेतना जैसे हाथो मे केन्द्रित करके, साँस रोके, सूक्ष्म से सूक्ष्म रूपरेखा को वह हृदयगम करने लगा। उँगलियाँ होठो पर आयी. और फिर न जाने क्या हुआ कि अपने होठो पर एक कोमल, मृदुल किन्तु अगारे जैसे तप्त स्पर्श से नन्दा चौंक पडी। उसने ठीक अपने कपोलो पर नरसिहम् की गर्म साँस महसूस की और तडाक् से जोर का एक चाँटा नरसिहम् के गाल पर बज उठा। बिजली की कोध की तरह यह सब हो गया।

सिर झुकाए हत्या के अपराधी की तरह नरसिहम् बैठा था, पश्चाताप और ग्लानि की साकार मूर्ति, और तनी हुई हाँफती नन्दा उसे घूर रही थी। उसकी आँखो मे आँसू खौल रहे थे। उसने फिर कर कहा, 'मै तुम्हे ऐसा नही समझती थी।'

नरसिहम् चुपचाप बैठा था, इस वार उसने जरा सिर उठाया, बडे स्पष्ट स्वर मे पूछा, 'कैसा ?'

'कि साधारण लोगो की तरह तुम भी यो इन कुत्सित वासनाओ के कीडे हो ?' स्वर की तेजी मे ज़रा भी कमी नही थी।

शायद नरसिहम् सोचता रहा कि उत्तर दे या न दे, फिर जरा साहस से उसने कहा, इसमे नन्दा, मेरी तो गल्ती नही है। यह तो तुम्हे मेरी इन कृतियो को देखकर खुद सोचना चाहिए, जिसके पास भावनाओ का इतना खजाना है कि नित्य अपनी कृतियो मे बिखेर कर भी जो समाप्त नही होता, वह स्वय इन भावनाओ से अलग कैसे होगा ? भावनाओ के तीव्र ज्वार मे बह जाना तो मेरे लिए और भी सरल है, क्योकि हर भावना की अनुभूति मुझे साधारण लोगो की अपेक्षा अधिक उत्कटता से होती है।'

'भावना नही, वासना !' नन्दा जोर से चीख पडी । फिर सँभल कर बोली, 'जहाँ तक सौन्दर्य की असाधारणता की पहचान और परख की बात है, मैं तुम्हारी भावनाओ का आदर कर सकती हूँ, लेकिन यह, यह तो वासना है, और इसके आगे झुकने को मै कभी भी तैयार नही हूँ।'

'कोई बुरा काम तो मैंने किया नही है नन्दा।' नरसिहम् ने नन्दा की आँखो मे अनुमान से देखकर कहा, 'रूप असाधारणता को परखना-पहचानना कोई बुरा काम नही है, और जो सचमुच इसे परख-पहचान लेता है, वह इसकी पूजा किये बिना कैसे रह सकता है ?'

'पूजा !' नन्दा ने विद्रूप से दुहराया—'क्यो पूजा जैसे पवित्र शब्द की खिल्ली उडाते हो ! यह पूजा है ?'

'मैं तो इसे पूजा के अतिरिक्त कोई नाम नही देता।' नरसिहम् ने बेझिझक उत्तर दिया, 'तुम्हारे लिए पूजा का अर्थ धूप-दीप नैवेद्य की आरती है। लेकिन उस समय मन मे हमारे चाहे जो हो, हाथ हमारे पूजा करते है, इस दुविधा को हम आत्मा का अचन मानते है, लेकिन मेरी इस पूजा मे मन और हाथो या शरीर की एकनिष्ठता ही सबसे पवित्र वस्तु है। मन-सहित जहाँ हमारी सारी ऐंद्रिक चेतना एक बिन्दु पर केन्द्रित हो जाती है, वही पूजा का सर्वश्रेष्ठ रूप है।'

'नही, सारी चित्त-वृत्तियो का निरोध और आत्मा की शुद्धि ही पूजा है। जब तुम नही जानते, तो किसी चीज़ को गलत क्यो कहते हो ?' नन्दा ने तीव्रता से काटा।

उसका समस्त रूप और शरीर क्या करे, जिसके बिना आत्मा कुछ भी नही है ? सचेत सरलता से नरसिहम् ने कहा, 'पूजा के लिए एक निष्ठता की आवश्यकता है, और एक निष्ठता बिना सन्तोष के नही आ सकती। सन्तोष के लिए आवश्यक है तृप्ति—जो जिसका ग्राह्य है, भोजन है, उसे वह दे देना ही तृप्ति है। नन्दा, शरीर की तृप्ति शरीर से है—रूप की तृप्ति रूप से, यही पूजा का पवित्रतम रूप है। तुम आत्मा

को भोजन देने के नाम पर शरीर को भूखा रखती हो । पूजा की एकनिष्टता कहाँ से आए ? यह तो ऐसा ही हुआ, जैसे घर के दो बच्चो मे से एक को जबर्दस्ती भूखा रखा जाए, और दूसरे को उसके सामने ही खूब भोजन दिया जाए, और फिर घर मे शाति की कामना की जाए ।'

'यदि एक बच्चा उपेक्षा के ही लायक है तो ?' नन्दा की भौहे तनी ही थी ।

'मैंने तो बात रूप के लिए तुम्हारे दृष्टिकोण से कही, मुझे तो दूसरा बच्चा ही काल्पनिक दिखाई देता है । काल्पनिक बच्चे के लिए वास्तविक को भूखा मारना, नन्दा, मुझे मूर्खता अधिक लगती है—पूजा-जैसी एकनिष्ठता और सत्यता तो इसमे है ही नही ।' नरसिंहम् ने दृढता से जवाब दिया ।

नन्दा धीरे-धीरे शान्त हो रही थी । अपलक दृष्टि मे उसके मुख की हर रेखा को पढने लगी थी । उसने स्वर को यथासम्भव शान्त करके कहा, 'नरसिंहम्, जो भी हो, तुम्हारी भावना का मैं आदर कर सकती हूँ, वासना का नही ।'

'नन्दा इस बात को तुम दुबारा कह रही हो, पर मेरी समझ मे नही आता, भावना और वासना मे अन्तर क्या और कहाँ है ?' नरसिंहम् ने पूछा ।

'शरीर का आधार ले कर – या शरीर के द्वारा व्यक्त होने पर भावना ही वासना हो जाती है, तभी वह निन्दनीय ..'

बात काट कर नरसिंहम् बोला, 'मेरी पूजा को तुमने 'वासना' कहा, क्योकि वह शरीर के द्वारा रूप का या रूप के द्वारा रूप का सम्मान था, और जब तक मैं वाणी से उसका सम्मान कर रहा, था, तुमने अधिक विरोध न किया । मैं पूछता हूँ, क्या स्वर के अवयवो से बनी वाणी का कोई शरीर-रूप या शारीरिक आधार नही है ? सशरीर वाणी से रूप सम्मान पवित्र है और...अच्छा खैर छोडो, तुम बताओ, बालक को गोद

मे बैठा कर उसके लाड-प्यार मे डूबी हुई माँ की शारीरिक तन्मयता वासना है या भावना ?' अपनी बात को अधिक अच्छे ढग से कह पाने का नरसिहम् के मुख पर आत्मविश्वास आ गया था ।

'लेकिन वासना ' इस उदाहरण से नन्दा चौक पडी । उसे लगा कि 'वासना की व्याख्या को अभी और दुहराने की आवश्यकता है । उसने जैसे हत-प्रभ होकर कहा, 'लेकिन नरसिहम् बालक के प्रति ममता की 'वासना' के खुले प्रदर्शन की समाज आज्ञा देता है, उसे स्वीकार करता है । और तुम्हारी इस पूजा की वासना '

'इसका अर्थ तो यह हुआ कि चार आदमी जो कुछ कह दे वह बडी चीज़ है, सत्य अपने-आप मे कुछ नही है । और क्या समाज का यही रूप शाश्वत हे ? खैर, फिर भी समाज के इस आज्ञा देने का क्या कारण है, जानती हो ?' इस बार नरसिहम के होठो मे हल्की मुसकराहट आ गयी, उसने नन्दा की 'नही'-सूचक मुद्रा को लक्ष्य करके स्वय उत्तर दिया, 'समाज इस वासना के प्रदर्शन की इसलिए आज्ञा देता है कि वह बहुत सस्ती साधारण-सी चीज है । जो सबसे अधिक मूल्यवान है, उसे बाजारो और हाटो मे नही फेका जाता, उसे अधिक-से-अधिक सचेष्ट, सावधानी से रखा जाता है ।'

'मैं यह जानना चाहती हूँ कि जब भावना और वासना दो अलग चीजे नही है, तो क्यो लोगो ने ये दो भेद कर दिये है—एक को श्रेष्ठ और एक को निम्न बताया है ?' नन्दा चिंतन मे डूब गयी ।

नरसिहम फिर हँस पडा । ज्ञानी राजकुमारी एक मूर्ख शिल्पी के सामने जिज्ञासू बन कर बैठी है । फिर भी वह बोला – 'नन्दा, मैने स्वीकार किया कि मैं और लोगो का ज्ञान नही जानता, यहाँ बैठे बैठे इन मूर्तियो से उलझते हुए ही प्रश्नो का जो उत्तर सामने आ जाता है, वही मेरी थाती है, ज्ञान, या सीमा है । तुमने अफलातून का नाम सुना है ? सुनते हैं, यह कोई बहुत बडा विद्वान हुआ है । वासना और भावना को अलग करके एक को ऊँचा एक को नीचा मानने का सिद्धान्त उसी

के नाम से जाना जाता है। वह भावना-भावना के प्रेम को और आत्मा-आत्मा के प्रेम को महान् और आदर्श बताता था । उसका आदर्शवादी प्रेम अफलातूनी के नाम से प्रसिद्ध है। लेकिन मैं तो दार्शनिक नही हूँ। एक साधारण, तुच्छ शिल्पी हूँ। मैने तुम्हे बताया कि भावना या आत्मा की मैं बिना रूप के कल्पना ही नही कर सकता। इतने दिन मूर्तियाँ बनाते हो गये, मुझे तो मानव-हृदय की गूढ-से-गूढ कोई ऐसी भावना नज़र नही आती, जो या तो शरीर के माध्यम से अभिव्यक्ति न पाती हो, या शरीर का आधार लेकर प्रकट न होती हो। कम-से-कम उसका कोई शारीरिक परिणाम या परिणति अवश्य होती है। तुम्हारे यहाँ शास्त्रो मे भी तो सुनते है कि भाव जब तक शरीर के स्तर तक नही आता, या अनुभवो के रूप मे अपने को व्यक्त नही करता, रस ही नही वन पाता है। सो भावना और वासना, यह विभाजन मुझे तो बिलकुल ही काल्पनिक लगता है। जब भावना शारीरिक आधार लेकर अपने को पूरी प्रकट नही कर पाती, या तुम्हारे शब्दो मे, वासना नही बन पाती या किन्ही कारणो से प्रकट होने के पहले हम उसे कुचल देते हैं, या सामाजिक सम्बन्ध के कारण उसमे से बहुत-सी ऐसी बातो को निकाल डालते हैं जिन्हे अशोभन समझते है, तो वासना, भावना के स्तर तक ही रहती है । एक शब्द मे, शायद अनभिव्यक्ति ही जिसका निश्चित अन्त या नियति हो, वह वासना ही भावना।'

'फिर यह दुनिया भर का बखेडा क्या है?' बार-बार की निरुत्तरता तथा पराजय से जैसे इस बार अत्यन्त ही व्यथित होकर नन्दा ने पूछा। उसका सारा क्रोध शान्त हो चुका था।

'बखेडा है, नन्दा, इस बात का कि हम किसी भी वस्तु को सम्पूर्ण नही देख सकते, देखना ही नही चाहते। हम स्वय जितना ऊँचे हैं, वही से उसके टुकडे कर डालते है। फल यह होता है कि जिसे महान् समझ कर हम देखने चले थे, वह टुकडो मे बँट कर साधारण रह जाती है, इस स्वप्न भग से तग आकर हम या तो हर महानता के प्रति विश्वास खो

बैठते है, या एक काल्पनिक महानता का निर्माण कर डालते हैं। साधारण व्यवहार मे ही लो, कोई भी महान व्यक्ति आता है, तो हम जो कुछ भी है, उसे उसमे घटा कर ही उसकी शेष महानता को जानना चाहते है, या स्वीकार करते है, हम इस भावना से उसके पास जाते है कि देखे तो सही कि वह क्या चीज है, जो हमारे अलावा उसके पास है, यह तो बिलकुल ऐसा ही हुआ जैसे सम्पूर्णत देखने के स्थान पर हम कुतुबमीनार को अपने सिर की ऊँचाई के बराबर से काट कर शेष महानता का अनुमान लगाना चाहे। इतना हम काटते इसलिए है कि इतने ऊँचे तो हम स्वय है ही, उसे क्या जोडे। फल यह होता है कि सारी ऊँचाई खण्ड खण्ड मे बँट कर साधारण रह जाती है। इसमे एक मजा यह है कि यह कटाई हम जड या आधार से ही शुरू करते है, क्यो कि वही तो हम खडे होते है, और आधार काट देने पर सारी ऊँचाई भहरा कर धराशायी हो जाती है। यही बात भावना और वासना के साथ है। हम वासना को काट कर भावना की ऊँचाई से देखना चाहते है, क्योकि वही तो हमारे पास होती है, और जिसे आसानी से काटा जा सकता है। और जब इस महत्वाकाक्षा मे भावना की ऊँचाई धराशायी हो जाती है, तो या तो हम सारी ऊँचाई मे ही विश्वास खो देते हैं या फिर एक अवास्तविक ऊँचाई की कल्पना कर डालते है, और उसे ही वास्तविक बताने का हठ सारे बखेडे की जड है।' चुप होकर नरसिहम् अपनी बात की प्रतिक्रिया देखने लगा।

'रूप! रूप! रूप! क्या सचमुच इस रूप के पार कुछ नही है, नरसिहम्?' राजकुमारी के इतने दिनो के विश्वास पूर्णत ध्वस्त हो चुके थे। वह नही जानती थी कि अचिर और अनश्वर समझ कर उसने जिन विश्वासो और विचारो को ग्रहण किया था, वे स्वय इतने कमजोर और नश्वर हैं। नश्वरता से छुटकारा पाने के लिए वह काल्पनिक अनश्वरता से चिपकी रही है, इस बात ने उसे विचलित कर दिया। शायद उसे अनश्वरता की कामना इतनी तीव्र और प्रिय थी कि वह किसी भी झूठ

से चिपकी रह सकती थी। छोडना नही चाहती थी। उसका गला भर आया।

'हाँ नन्दा, इस रूप के पार कुछ नही है, एक खालीपन है, शून्य है, जहाँ हम भटक जाते है, भरमा जाते है। गलती मान कर पछताते है, लेकिन झूठा आत्मसम्मान लौटने नही देता। रूप, आकार शरीर—वह विशेष हो या साधारण, यही सब-कुछ है, इसके बिना, इसकी अनुपस्थिति मे किसी भावना, किसी आत्मा का कोई अस्तित्व नही है। इसीलिए धरती सत्य है, क्योकि उसका एक रूप है, आकार है। आसमान शून्य है। धरती की तरह के और रूपो और सत्यो की तलाश मे, इस शून्य मे उडान भरना बुरा नही है। लेकिन आसमान मे उडते-उडते जब हम धरती को ही झूठ कहने लगेगे, तो ससार के सबसे बडे वितण्डावाद की सृष्टि होगी। उड चाहे हम जितना ले, लेकिन गिरेगे धरती पर ही, क्योकि धरती या रूप सत्य है, और सत्य मे एक ऐसा अप्रतिरोध्य आकर्षण है, जो दुनिया-भर मे भटकने के बाद हमे वही खीच लेता है।'

अचानक नन्दा दोनो हाथ मुँह पर रख कर फूट-फूटकर रो पडी। नरसिहम् चौक उठा, उसने टटोल कर नन्दा की बाँह पकड ली। सहानुभूति और सात्वना के मृदुल स्वर मे कहा—'नन्दा, मैं क्या करूँ? हर बार निश्चय करता हूँ कि तुमसे यह सब बाते नही करूँगा, लेकिन . लेकिन...।'

नन्दा उसकी गोद मे लुढक कर बिलख उठी, हिचकियो मे उसने कहा—'नरसिहम् मुझे बताओ मैं क्या करूँ? मैं जीवन-भर भटकती रही हूँ—एक के बाद दूसरी मरीचिका के पीछे दौडी हूँ। मेरे प्रश्नो का समाधान कहाँ है? कहाँ है वह जगह, जहाँ मुझे शाति मिलेगी?'

'पूजा से बढकर शान्ति की कोई जगह नही है नन्दा,' नन्दा के बिखरे, रूखे और चिकने बालो पर हाथ फिराते हुए नरसिहम् काँपते स्वर मे बोला, 'रूप सबसे बडा सत्य है सौन्दर्य उसकी सार्थकता। अत-

शोभा है, शृंगार है, और इस सुन्दरता को जिस पवित्रतम भावना के अक्षत से पूजने की बात मैं कहता हूँ, उसे अभी तक तुमने घृणा का नाम दिया है—'वासना' लेकिन वासना, शरीर के माध्यम से अभिव्यक्त होने वाला गतिशील सौन्दर्य है। निषेध ! तुमने अभी तक हर वस्तु का निषेध किया है, हर वस्तु को अस्वीकार किया है, अब सभी के प्रति एक सहज स्वीकृति और स्वागत का भाव और दृष्टिकोण ही तुम्हे इस मानसिक विक्षेप से बचा सकता है।'

और जब नरसिहम् की बाँहो मे नन्दा का दम घुटने लगा था तो उच्छ्वासित साँसो की छाया मे उसके होठो पर यही अस्फुट स्वर थे—'फिर यह नश्वर क्यो है ?'

पीछे वृक्षो की झुड-की-झुड पक्तियाँ और सामने नदी की लहराती धारा। हवा की साँसो से तरगित बालू के मुलायम गद्दे पर नरसिहम् और नन्दा आसमान की ओर देखते हुए लेटे थे। चाँद की फाँक नारियल के मोरपखो से इस तरह झाँक रही थी जैसे रात-रानी चलती-चलती कुछ देख कर ठिठक कर सोचने लगी है—दूर लहरो के टकराने की हल्की-हल्की ध्वनि, टिटहरी की चीख और एकरस साँय-साँय—

आँखे बन्द किये हुए गद्‌गद् स्वर मे नन्दा ने पूछा—'नरसिहम्, तुमने बताया नही।'

'क्या ?'

'अब फिर शुरू से पूछूं ?' इस दुहराने मे झुझलाहट नही, प्यार था 'ससार का सबसे बडा सत्य क्या है ?'

'रूप, आकार ?'

'लेकिन यह नश्वर क्यो है ? क्यो यह समाप्त हो जाता है ?'

'अच्छा नन्दा, तुम जानती हो, नाश किसका होता है ?'

'हाँ, परिवर्तनशील रूप का नित्य नवीन सौन्दर्य हमारे हृदय मे ग्रानन्द उल्लास की सृष्टि करता है, करता रहे, हम उस सौन्दर्य को अमर-वासना के अक्षत से पूजते रहे ।'

नन्दा फिर धीरे मे लेट गयी। विभोर होकर उसने आँखे वन्द कर ली, 'लेकिन लोग इस सबके इतने विरोधी क्यो है ?'—स्वर मे प्रश्न नही गहरा उच्छ्वास था ।

लेकिन नरसिंहम् इस वाक्य की समाप्ति के साथ ही झटके से उठ बैठा ग्रौर आँखे फाड-फाड कर अँधेरे मे देखने लगा ।

नन्दा चौकी, उसने यो ही लेटे-लेटे आँखे बन्द किये पूछा—'क्या बात है नरसिंहम् लेट जाग्रो न !'

'कुछ नही—' नरसिंहम् उसी तरह सोचता रहा—अपलक देखता रहा ।

'तब भी ?' नन्दा ने यो ही हट करके अपनी मासल भुजा उसकी जाघ पर रख दी ।

'नन्दा, जब एक बार हमारा-तुम्हारा परिचय हुआ था, तब तुमने पूछा था कि मैं मूर्ति क्यो बनाता हूँ ?—इससे क्या लाभ है ? और जानती हो, मैं उसका उत्तर नही दे पाया था। ग्राज अचानक वह बात मेरी समझ मे आ गयी है, ग्रौर मुझे लगता है जैसे मैं भूत, भविष्य सभी कुछ देखने लगा हूँ ।'

'क्या ?' नन्दा ने ऐसे ही किसी आनन्द मे लीन पूछा ।

'सुनो, मैं मूर्तियाँ इसलिए बनाता रहा हूँ, और आगे भी इसीलिए बनाऊँगा कि निरन्तर सौन्दर्य की सृष्टि, नित्य नवीन सौन्दर्य की सृष्टि होती रहे ।—' उत्साह से नरसिंहम् जल्दी-जल्दी पलक झपका कर कहता रहा—'सौन्दर्य आनन्द उत्पन्न करेगा और आनन्द जीवन को ताज़ा रखेगा, उसकी प्रेरणा वनेगा। लेकिन तुमने अभी कहा कि फिर क्यो लोग उसका विरोध करते है। क्यो कि 'विरोध' उनका स्वार्थ साधता है, वे बातो मे रूप को झुठलाते है, व्यवहार मे उसका नाश करते हैं ।

अर्थात् वे स्वस्थ सौन्दर्य के हर जगह प्रबल विरोधी है, फलत जीवन की मूल आनन्द प्रवृत्ति के स्थान पर दुख या दुखवाद, यानी जीवन के निराशा और निषेधवादी विचार, हाहाकार और करुणा को पैदा करते हैं। इस दुख और हाहाकार के विरुद्ध मेरी ये मूर्तियाँ अपने स्वस्थ सौन्दर्य और साकार आनन्द का निर्माण करेगी। रूप सौन्दर्य और आनन्द के जो भी शत्रु हैं, ये जिस वेश और जिन कपडो मे है, मैं उसके विरुद्ध सारी शक्ति से लडूँगा।'—फिर थोडी देर तक चुप रह कर बोला—'प्रभु यीशु ने कहा था—'इस दुनिया को जितनी सुन्दर पाओ, प्रयत्न करो कि जब तुम जाओ तो वह इससे अधिक सुन्दर हो।' उसे अधिक सुन्दर बनाने और इस सुन्दरता के विरोधियो को परास्त करने के लिए मैं कुछ भी उठा न रखूँगा।'

रूप के विकास की मधुर कल्पना मे नन्दा बेसुध थी, उसकी आँखे बन्द थी और आनन्द के प्रसार की शक्ति से अनुप्रमाणित नरसिंहम् भविष्य के पार देख रहा था।

दोनो अपनी ऊँचाईयो से नीचे गिर गये थे—इसलिए

यही शिल्पी नरसिंहम् के पतन की कहानी है।

# गड़बड़ी पैदा करने वाले

•

लडकी का नाम रचना है। रोज पुकारने मे हम लोग उसे टिंकू कहते है। यह घटना उसी के साथ हुई थी। हमे बहुत दिनो बाद पता लगा।

उन दिनो टिंकू को बहुत डर लगता था। वह अकेली नही सोती थी, कमरे मे कोई न हो तो रोती थी। न वहाँ जा सकती थी, न अकेले रह सकती थी। बिना किसी को साथ लिये बाथरूम नहीं जा सकती थीं, अँधेरे मे सीढियाँ उतरते-चढते उसकी साँस रुक जाती थी। उसका डर निकालने की हमने बहुत कोशिश की, लेकिन वह नही निकला। हार कर हमने उसे हनुमानजी की कहानी सुनायी। उनके बल और कामो के बारे मे बहुत कुछ बताया। समझाया कि किस तरह उनका नाम लेते ही डर भाग जाता है। वे अपनी दुम मे बडे-बडे राक्षसो को लपेटकर पटक देते है, गदा मार-मार कर उनका सिर चकना चूर कर डालते है। वे सागर लाँघ सकते हैं। लेकिन जितना उनके शरीर मे बल है उतनी ही मन मे दया भी है। भोले मन से अगर बालक भी याद करे तो वे जरूर उसकी सहायता करते है। वे बालको को चाहते भी बहुत है।

हनुमानजी के ये सब गुण सुनकर टिंकू को बडी खुशी हुई। वह किसी ऐसे ही सहारे की तलाश मे थी। उसने उनको लेकर बहुत से सवाल

किये। हमने हनुमानजी की एक बडी-सी तसवीर लाकर दीवार पर लगा दी। तसवीर पर शीशा चढा था। टिंकू बडे आदर से उनके सामने हाथ जोडकर सिर झुकाने लगी। वह उनसे कहती, 'हे हनुमानजी, आप बहुत बलवान और दयावान है। मुझे जब भी डर लगे तो आप ज़रूर मेरी मदद कीजिए। मैंने सुना है आप छोटे बालको को बहुत चाहते है। मैं भी बहुत छोटी हूँ।' वह रोज उन पर माला चढाती और उनकी आरती गाती। वह बडे सरल मन से उनकी पूजा करने लगी।

एक बार हमारे यहाँ कुछ महमान आये। ये बडी देर तक बैठे। नौकर कही चला गया था। हमने टिंकू से कहा कि जाकर दूकान से पान ले आओ। दूकान पास ही थी। सडक भी पार नही करनी पडती थी। टिंकू महमानो के सामने यह पता नही चलने देना चाहती थी कि उसे डर लगता है, इसलिए वह तैयार हो गयी। लेकिन उसे बडा डर लग रहा था। वह चाहती थी कि उसके साथ कोई चले। वह भीतर कमरे मे जाकर हनुमान की तसवीर के सामने खडी हो गयी और हाथ जोड-कर विनती करने लगी, 'हे हनुमानजी, आपको तो पता ही हैं कि मुझे अकेले पान वाले की दूकान तक जाने मे बडा डर लगता है। आप भी मेरे साथ चलिए न . ।' उसकी आँखें बन्द थी। किसी चीज़ के टूटने की आवाज़ सुनकर उसने जो आँखें खोली तो डर के मारे उसका मुँह खुला रह गया। उसके गले से आवाज़ ही नहीं निकली। वह बेहोश होने लगी।

उसने देखा, तसवीर का शीशा तोडकर हनुमान जी इस तरह बाहर निकल रहे हैं जैसे किसी खिडकी से नीचे उतर रहे हो। वे उसके सामने आकर खडे हो गये। उनका शरीर गेंद की तरह फूलकर बडा हो गया। बदर जैसा लाल-लाल मुँह और ऐसी भारी मोटी पूछ वाला आदमी तो टिंकू ने कभी देखा ही नही था। उनके शरीर पर केवल एक लाल जाँघिया था। सारे बदन पर शेर जैसे बडे-बडे बाल थे। हाथ-पाव पहलवानो

जैसे तगडे थे। टिकू की ऐसी डरी हुई हालत देखकर हनुमान जी ने उसे पुचकार कर बडी नरम आवाज मे कहा, 'डरो नही बेटी, हम हनुमानजी है। तुम अकेले जाने मे डरती हो इसलिए हम साथ चलने के लिए आये है। कोई भी कुछ करेगा तो हम इस गदा से उसका सिर फोड देगे ।' हनुमान जी ने अपने कधे से उतारकर टिंकू को अपनी भारी-सी गदा दिखायी।

हनुमान जी की ऐसी नरम आवाज़ सुनकर धीरे-धीरे टिंकू के मन मे साहस आया। हो सकता है अपने आप हनुमान जी ने टिंकू के मन का डर खीच लिया हो। उनका शरीर जरूर बहुत बडा था, लेकिन मुख पर मधुर भाव टपक रहे थे। टिंकू ने बदर और आदमी के मिले-जुले शरीर वाला कोई भी नही देखा था, फिर भी उसे लगने लगा कि हो न हो हनुमान जी ही है। उसके मन की बात जानकर उसकी मदद करने आये हैं। फिर भी उसने बताया, 'हमे आपको देखकर ही डर लगता है ..।'

हनुमान जी ने उसके सिर पर हाथ फेरा और बडी मीठी आवाज़ मे कहा, 'डरो नही बेटी, तुमने ही तो हमे बुलाया है। अब तुम खुद ही डरोगी तो कैसे काम चलेगा ? चलो, हम तुमको पान दिलाकर लाते हैं।' कहकर हनुमान जी ने उसका छोटा-सा हाथ अपने हाथ मे ले लिया। बालो वाला ऐसा हाथ छूकर एक बार तो टिंकू के सारे शरीर मे फुरहरी आयी, फिर सब ठीक हो गया।

जैसे जादू के ज़ोर से टिंकू के मन का सारा भय निकल गया। उसे लगने लगा कि इन हनुमान जी को तो वह बहुत दिनो से जानती है। अब कोई उसका कुछ भी नही बिगाड सकता। उनकी ताकत देखकर उसे बडा भरोसा हुआ।

वे दोनो बाहर सडक पर निकल आये। टिंकू ने पूछा, 'हनुमान जी आपको जाडा नही लगता ?' हँसकर वे बताने लगे, 'नही बेटा, हमे न

जाडा लगता है न गरमी। हमें किसी भी चीज का कोई डर नही है।'

जिस तरह टिकू ने पहले कभी हनुमान जी को नही देखा था, इसी तरह बाहर सडक पर चलने वाले लोगो ने भी नही देखा था। सबने बदर देखे थे, आदमी देखे थे, लेकिन आदमी और बदर का ऐसा मिला-जुला रूप नही देखा था। सबने समझा कि रामलीला का कोई आदमी है जो हनुमानजी का वेश बनाकर आ गया है। सब लोग तमाशा देखने के लिए सडक पर ठिठक कर खड़े हो गये। भीड जमा हो गयी। लोगो ने इन दोनो को घेर लिया, लडके-लडकियाँ तालियाँ बजा-बजाकर शोर मचाने लगे। सबने कहा, इस आदमी ने सारे शरीर पर बाल चिपका लिये हैं, नकली मुँह और दुम लगा ली है। यह यो बहुरूपिया है। हनुमानजी मन ही मन हँसते रहे।

पर जब कुछ लोगो ने उनकी पूछ और बालो को खीचना शुरू कर दिया तो उनसे रहा न गया, उनको इतना बुरा लगा कि वे नाराज़ हो गये। वे पूछ सीधी तानकर इधर-उधर घुमाने लगे। अब तो डर के मारे लोगो का बुरा हाल हो गया। सब पीछे हट गये और चीख-पुकार मच गयी। लोगो ने मान लिया कि पूछ नकली नही है। सब कहने लगे, 'अरे, यह कैसा आदमी है? इसकी पूछ तो असली है।' लोगो को यो भागते और चीखते देख-देखकर टिकू तालियाँ बजा-बजाकर हँसने लगी। जब उसकी हँसी रुकी तो उसने बताया, 'इनको परेशान मत करो। ये सच-मुच के हनुमान जी हैं, नाराज हो गये तो मुसीबत कर डालेंगे। हमे डर लगता था इसलिए हमे पान दिलाने आये हैं।' लेकिन उसकी बात किसी ने न मानी।

सचमुच के हनुमान जी इस तरह आकर छोटी-सी लडकी के साथ बीच सडक पर चल सकते हैं। लोगो को इस बात पर भरोसा ही नही आ रहा था। वे दूर से ही उस पर ककड और ढेले फेंकने लगे। जब एक ढेला टिकू के पास आकर गिरा तो हनुमान जी आपे से बाहर हो

गये। वे ज़ोर से दहाड़ने लगे। लोगो की ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे रह गयी। वे दूर खडे-खडे उसी तरह उन लोगो पर ईंट-ककड फेकते रहे। अब हनुमान जी ने जो अपनी पूँछ लम्बी करके घुमाना शुरू किया तो जिसको जहाँ जगह मिली वहाँ जाकर छिप गया। सबके सब घरो मे जा घुसे और वहाँ से झाँकने लगे। सबने देखा कि हनुमान जी की पूँछ के सिरे पर मशाल जैसी आग जल रही है। उनको लगा कि अब तो सारे घर जल जायेगे। कुछ लोगो ने आग बुझाने वाले इजन को फोन किया, किसी ने पुलिस को।

टन्-टन् करती हुई आग बुझाने वाली मोटरे और घूँ-घूँ करती हुई पुलिस की जीपे दौडने लगी। चारो तरफ पुलिस खडी हो गयी और उन पर मोटे-मोटे पाइपो से पानी फेका जाने लगा। अब हनुमान जी ने अपना असली रूप दिखाया। वे बहुत बडे हो गये थे। हाँ, टिंकू को अभी भी उतने ही बडे लग रहे थे जितने उसके साथ आये थे। वे टिंकू के ऊपर न पानी गिरने दे रहे थे न ईंट-ककड। आस-पास खडे लोगो मे से कोई मानने को तैयार ही नही था कि वे सचमुच के हनुमान जी है। लोग जाने कितने सालो से उनकी पूजा करते थे, आरती गाते थे, सकट पडने पर हनुमान चालीसा का पाठ करते थे लेकिन कोई सोच भी नही सकता था कि वे यो चलते-फिरते सामने आ जायेगे।

उधर हनुमान जी का सामना कौन करता ? वे बडे-बडे राक्षसो को चुटकी बजाते उडा चुके थे। इन लोगो को मज़ा चखाना तो उनके बाएँ हाथ का खेल था। बडे-बडे पेडो और पहाडो को वे जड से उखाडकर रावण की सेना पर फेक चुके थे, सुमेरु पहाड पूरा का पूरा उठा लाये थे, सागर को एक ही छलाँग मे पार कर चुके थे। सारी लका फूँक डाली थी। अब सबके देखते-देखते पुलिस की जीपो और आग बुझाने की मोटरो को फूल की तरह उठाया और मीलो दूर फेक दिया। चारो तरफ हाय-हाय मच गयी। वायरलैसो से पूरे शहर की पुलिस और फौज को खबर कर दी गयी। हनुमान जी जानते थे कि दुनिया की कोई भी फौज या

पुलिस उनका कुछ भी नही बिगाड सकती। किसी गोली और बम का उन पर कोई असर नही होगा। लेकिन वे अपने ही लोगो को मारना या उनको नुकसान नही पहुँचाना चाहते थे। वे भारत के रहने वाले थे और यहाँ के लोगो को बहुत चाहते थे। अगर यहाँ के लोग अपना बुरा चाहने वाले किसी भी दूसरे देश को मजा चखाना चाहते तो यह काम वे पलक मारते कर सकते थे। इस समय तो सबने अपनी नासमझी के कारण उनको नाराज कर दिया था। इस बात को समझकर वे फिर पहले जैसे हो गये, मन की सारी नाराजी दूर कर दी।

टिकू से कहने लगे, 'बेटी, ये लोग हमको पहचान नही पा रहे है, इसलिए ऐसा कर रहे हैं। इनसे उलझने मे कोई फायदा नही है। चलो, पान दिलाकर हम तुमको घर छोड देते है। फिर हम लौट जायेंगे। यहाँ हमारा रहना ठीक नही है।'

पानवाला भय से थर-थर काँप रहा था। वह हनुमान जी का रूप और बल देख चुका था। उसने हाथ जोडकर सिर झुकाया। फिर फौरन पान लगाकर टिकू को दिये। वह पैसा लेना भी भूल गया। टिकू को बुरा लग रहा था कि हनुमान जी जाने की बात कहते थे। वह चाहती थी कि वे उसके साथ ही रहे।

दोनो वापस घर आये। टिकू बहुत ही खुश थी। उसे लग गया कि अब किसी से भी डरने की कोई बात नही है। उसके साथ सचमुच के हनुमानजी ही है। जब दोनो भीतर आये तो हनुमान जी ने टिकू के सिर पर हाथ रखकर कहा, 'बेटी, अब हम जाते है। जब डर लगे तो हमे याद कर लेना। तुमको फिर डर नही लगेगा।'

टिकू सोचने लगी कि वे कहाँ जायेंगे, कैसे जायेंगे। ये चले जायेंगे तो फिर उसे डर लगेगा। उसने कहा, 'नही, आप मत जाइये, हमारे साथ यही रहिए। हम दोनो घूमने जाया करेंगे। मैं आपको जाने नही दूंगी।'

हनुमानजी ने समझाया, 'बेटी, हम यहाँ रह नही सकते। दुनिया के लोग हमे तसवीरो मे देखकर किताबो मे हमारी बाते पढकर, गानो मे हमारे गीत गाकर ही खुश रहते है। लेकिन वे सचमुच के हनुमानजी को सहन नही कर सकते। हमे ही नही, वे किसी को भी सहन नही कर सकते। हमारी तो कोई बात ही नही, अगर भगवान राम भी हमारी तरह यहाँ आ जाये तो ये लोग उनका रहना कठिन कर देगे।'

टिकू ने सवाल किया, 'लेकिन सब लोग आपको बहुत ही पूजते हैं, आपके गीत गाते है, आरती उतारते है। आपका सचमुच का रूप देखकर वे सहन कैसे नही कर पाते ?'

हनुमान जी ने समझाया, बेटी, किताबो मे, तसवीरो मे हजारो आदमी-औरते, देवी-देवता ऐसे है, जिनको हर आदमी चाहता है, पूजा करता है और उनकी तरह ही बनना चाहता है। वह वैसा बनने की जीवन-भर कोशिश भी करता है, लेकिन उन किताबो या तसवीरो से निकलकर कोई अगर सचमुच बाहर, लोगो के बीच मे आ जाये तो वे उसे गडबडी पैदा करने वाला मानते है। परेशान करके उसकी नाक मे दम कर देते है, उसका जीना कठिन कर देते हैं और कभी-कभी तो मार भी डालते है।'

'लेकिन हनुमान जी, आप उनको समझाइये न।'

'नही बेटा, उनकी समझ मे यह बात आयेगी ही नही। बात यह है कि हम लोग या तो बीते हुए समय के लोग है या तो आने वाले समय के। इस समय हमारे होने से बडी गडबड पैदा होती है। बाकी लोग वैसे नही है न।' फिर उसे दुलारकर हनुमानजी ने कहा, 'बेटी, हम चलते है। खुश रहो। अब जब भी तुम हमे याद करोगी तो हम मन मे ही आया करेगे। इस तरह नही आयेगे। हम सबके मन की बात समझते है।'

वे फिर तसवीर मे घुस कर गायब हो गये। शीशा अपने आप पहले की तरह जुडकर ठीक हो गया। टिंकू ने आँखे मूदकर हाथ जोडे, सिर झुकाकर विदा दी।

जब वह पान लेकर मेहमानो के सामने आयी तो सबने उसकी बहुत तारीफ की, 'टिकू, तुम तो बिना देर लगाये अपने आप जाकर पान ले आयी। तुम तो बहुत समझदार लडकी हो।'

किसी को भी पता नही था कि टिकू के साथ अभी-अभी कोई घटना घटकर चुकी है। नीचे का शोर भी वहाँ किसी को सुनायी नही दिया। उनके लिए तो टिकू गयी और पान लेकर आ गयी। मेहमानो को पता भी कैसे चल सकता था?

# घर की तलाश

किसी गाँव मे एक किसान रहता था। उसके पास खेत, बैल, मकान सभी कुछ था। उसके लडके का नाम रामू था। रामू खेलता-पढता और मन होता तो थोडा बहुत काम कर देता। किसी तरह समय निकाल कर वह गाँव के बूढे हीरा से उसके बचपन की कहानियाँ सुना करता। इन कहानियो को सुनकर रामू का भी मन होता कि वह हीरा दादा जैसा खूब घूमे-खूब घूमे, जगल, पहाड, नदी, समुद्र देखे। वह चीलो को उडते देखता तो उसे बडा अच्छा लगता। सोचता कि अगर उसके भी पख होते तो वह भी आकाश मे सारे दिन उडता और शाम को घर लौट आता।

एक दिन रामू सुबह-सुबह नहर के किनारे भटकता-भटकता काफी दूर निकल गया। थककर वह एक पेड के नीचे विश्राम करने बैठा तो उसे वहाँ दो बडे-बडे पख दिखायी दिये। उसने इधर-उधर देखा, कोई भी नही था। डरते-डरते वह पखो के पास गया। उन्हे धीरे-से उठाकर देखा तो उसे वे बडे अच्छे लगे। उनमे डोरियाँ जैसी रस्सियाँ थी। उसने डोरियाँ बाँधकर पख लगा लिये, और उडने की कोशिश की। अरे, लो, वह तो उडने भी लगा। खुशी के मारे उसका तन-मन रोमाचित हो

आया। कैसी आसानी से वह पेडो के ऊपर उड आया था। नहर और खेत नीचे रह गये थे और वह ऊपर-ऊपर ही उडता जा रहा था। उसका मन हुआ कि वह उडता हुआ ही घर तक पहुँचे। चुपचाप छत पर उतरे और माँ-बाप को पख दिखाये। लेकिन वह डरा, हो सकता है माँ-बाप पख छीन ही ले। रामू ने तय किया—'पहले खूब सैर कर लूँ, फिर जाकर माँ-बाप को बताऊँगा।' अब वह खुले मन से उडने लगा। नीचे नदियाँ चाँदी के तारो की तरह फैली थी। पेड हरी बूदो जैसे लग रहे थे। इस तरह पता नही, रामू कब तक उडता रहा।

उडते-उडते रामू खूब थक गया। अब उसे भूख लगने लगी। उसे ध्यान आया कि [illegible] लौटना चाहिए। लेकिन वह लौटता किस दिशा मे? उडने के उत्साह मे उसे तो यही खयाल नही रहा कि वह किधर निकल आया है। उधर एक ओर सूरज डूब रहा था। दूसरी ओर अधियारा छा रहा था। रामू ने सोचा, जल्दी ही घर पहुँच जाना चाहिए। वह कुछ नीचाई पर आकर घर तलाश करने लगा। लेकिन ऊपर से सारे गाँव एक जैसे दिखायी देते थे। उसे अपना गाँव ही पहचान मे नहीं आ रहा था। अब तो वह बहुत घबराया। इसी बीच माँ-बाप की परेशानी का ध्यान आते ही उसे रोना आने लगा।

कुछ ही देर मे रात घिर आयी। अँधेरा बहुत बढ गया था। अब नीचे रोशनियाँ भी टिमटिमाती दीखने लगी थी। रामू को लगा अँधेरे मे गाँव को तलाश करना असम्भव है। उसने तय किया कि कही न कही रात बिताकर कल सुबह गाँव की तलाश करनी चाहिए। यह सोचकर वह नीचे आया। सामने कुछ झोपडियो जैसे मकान थे। वह उनकी ओर बढा। तभी उसे खयाल आया कि पख देखकर गाँव वाले उसे परी या भूत न समझ ले। इसलिए एक झाडी मे उन्हे छिपा दिया।

लडखडाता-हाँफता रामू एक झोपडी के दरवाजे तक पहुँचा तो भूख

थकान और डर के मारे उसका बुरा हाल था। वहाँ एक किसान बैठा हुक्का पी रहा था। उसकी पत्नी चूल्हे पर रोटियाँ बना रही थी। रामू को देखते ही किसान ने पूछा, 'अरे लडके, तू कौन है ? कहाँ से आया है ?'

रामू ने रोते-रोते उसे बताया, 'मै भी किसान का लडका हूँ और जगल मे भटककर रास्ता भूल गया हूँ।' रामू की हालत देखकर किसान को उस पर दया आ गयी। उसने बडे प्यार से उसे समझाया। उसके हाथ-मुँह धुलवाये, खाना खिलाया और सोने के लिए बिस्तर बिछा दिया। पर रामू को बडी देर तक नीद नही आयी। माँ-बाप की परेशानियो को सोचकर वह रोता रहा। और उसे बुरे-बुरे सपने आते रहे।

अगले दिन उस किसान ने रामू को लेकर आस-पास बहुत खोज की बहुत से लोगो से पूछा लेकिन न रामू के गाँव का पता लगा और न ही उसके माँ-बाप का। इस परेशानी मे वह पखो के बारे मे भी भूल गया। अब वह वही रहने लगा।

उधर किसान की एक लडकी थी। उसका नाम था राधा। राधा रामू के बराबर की थी। वह उसके साथ खेलती और उसका मन बहलाने की कोशिश करती।

एक रात की बात है। रामू अपने माँ-बाप, खेत-फसल के बारे मे राधा को बता रहा था। अचानक उसे याद आया कि नहर के किनारे उसे पख मिले थे। उन्हे ही बाँधकर वह उडते-उडते अपने गाँव से दूर निकल आया था। उसे यह भी याद आया कि उसने पख एक झाडी मे छिपा दिये थे। वह उसी समय पख खोजने जाने लगा। राधा ने उसे समझाया 'सुबह उठकर पख खोज लेना। लेकिन अपना गाँव पहचानोगे

कैसे ?' रामू ने उत्तर दिया, 'दिन की रोशनी मे मैं ज़रूर अपने गाँव को पहचान लूँगा।'

सुबह उठते ही रामू सबसे पहले पख खोजने झाडी के पास पहुँचा लेकिन उनका वहाँ कोई नाम-निशान नही था। उसने सारी झाडियाँ खोज डाली लेकिन पख कही नही मिले।

अब रामू वही रहने लगा। राधा के साथ खेलता। खेतो मे काम करता और पशु चराने जाता। धीरे-धीरे वहाँ उसका मन लगने लगा। कभी-कभी उसे अपने घर-गाँव और माँ-बाप की याद आ जाती तो बडा उदास हो जाता। उसकी आँखो से आँसू झरने लगते।'

दो साल-चार साल। पता नही रामू को वहाँ कितने साल बीत गये। वह बडा हो गया और किसान ने राधा की शादी उसके साथ कर दी। एक अलग झोपडी बना दी। लेकिन कभी-कभी रामू को उसके माँ-बाप की याद आती तो उसे लगता कि यह घर उसका नही है। मुझे अपने घर गाँव की खोज मे जाना है। उसने कई बार राधा से कहा भी कि अब हम दोनो को घर की तलाश मे निकलना चाहिए। लेकिन राधा कह देती—'किसी दिन चलेगे।' इसी बीच उसके घर एक नन्हा मुन्ना बच्चा भी आ गया।

एक दिन राधा कही बाहर गयी थी। रामू किसी सदूक से सामान निकाल रहा था। तभी उसके कपडो के नीचे कुछ पख दिखायी दिये। रामू उन्हे फौरन पहचान गया। अरे, ये तो उसके वही पख है लेकिन ये यहाँ आ कैसे गये ? पख झाडी मे छिपाये है, यह बात उसने सिर्फ राधा को ही बतायी थी। उसने चुपके से पख निकाल लिये। अब रामू ने सोचा, तो राधा ने ही यह पख छिपा लिये थे। इतने दिनो से राधा ने

भी नही बताया कि पंख उसने संदूक मे छिपा रखे है। उसे बहुत बुरा लगा। ऐसी भोली और सीधी राधा उसे धोखा देती रही। उसे राधा पर गुस्सा आने लगा। पखो ने रामू को घर की, माँ-बाप की याद दिला दी थी। उसने तय किया कि वह राधा को इस झूठ की सजा देने के लिए ही वह एक बार घर की तलाश मे जरूर जायेगा। तभी उसे अपने बच्चे और राधा का ध्यान आया। उसने तय किया कि वह घर जाकर उसी दिन वापस आ जायेगा।

अगले दिन वह पख लेकर सुबह-सुबह ही जगल मे चला गया। राधा बच्चे के साथ सो रही थी। रामू ने पख बाँधे और चील की तरह ऊपर उडने लगा। उसका मन आनन्द से नाचने लगा। उसे लगा जैसे ये पिछले साल राधा और उसके माँ-बाप के साथ बिताये ही नही है। वह पहली बार की तरह ही उड रहा है। उसने पेड, नदी, नालो, पहाड को देखकर पहचान लिया कि पहले की तरह जगह ही न भूल जाये। फिर वह ऊपर, और ऊपर उडने लगा। उसे यह भी ध्यान नही रहा कि वह अपना घर खोजने निकला है। जब उडते-उडते थक गया तब उसे ध्यान आया। अब उसने इधर-उधर घर की तलाश की। लेकिन अब न तो उसे अपना घर ही दिखायी देता था और न ही राधा-का घर। उसे तो चारो तरफ पहाड, जगल और समुद्र ही दिखायी पडते थे। वह बहुत देर तक काफी नीचाई पर खेतो और जगलो के ऊपर उडता रहा। पर दोनो मे से कोई भी घर कही भी न दीखे।

कहते हैं, रामू उस दिन से आज तक उसी तरह भटक रहा है। उसे जो कुछ मिलता है, खा लेता है, कही खाकर सो जाता है। और वह सारे दिन और कभी-कभी रात मे भी आसमान का चक्कर काटता रहता है। रामू को अपनी पिछली भूलो पर पश्चाताप भी है। पहली बार पख पाकर वह घर लौटना भूल गया और दूसरी बार भी उसने यही गलती दोहरायी। पर अब रामू समझदार हो गया है। उसे विश्वास है

कि वह एक न एक दिन अपने घर तक ज़रूर पहुँच जायेगा। अब वह एक पल को भी पखो को अपने से अलग नही करता। हमेशा उन्हे अपने साथ रखता है। उसे विश्वास है कि पख साथ रहेगे तो वह एक न एक दिन घर ज़रूर तलाश कर लेगा।

# परी नही मरती

बहुत दिनो की बात है । एक परी अपने हस जैसे पँख फैलाये सैर करने उडी जा रही थी । नीचे पहाड, खेत और झीलें गुज़रती जा रही थी । मौसम सुहावना था और साँझ का समय था । तभी उसे एक बडी सुन्दर-सी नदी दिखायी पडी, दोनो ओर घना जगल था । उसका मन नदी के किनारे टहलने को हो आया । हरी-भरी जगह देखकर वह उतरी और घूमने लगी । अचानक उसकी निगाह एक पेड के नीचे गयी तो देखा कि वहाँ कोई सो रहा है । पास गयी, एक बहुत सुन्दर नौजवान गहरी नीद मे सो रहा था । उसके कपडे फटे-पुराने थे, उनमे काई और सिवार लगे थे । शरीर पर जगह-जगह चोटो के निशान थे और वह इस तरह बेहोश सो रहा था जैसे न जाने कब का भूखा-प्यासा थका माँदा वहाँ आकर पड गया हो । कुछ देर तो वह अपनी सुध-बुध भूलकर उसकी सुन्दरता को निहारती रही, फिर उसे ध्यान आया कि अब लौटना भी है । लौटी तो मन नही माना, पता नही यह किस मुसीबत का मारा यहाँ पडा है । मालूम नही जीवित भी है या बेजान । पास जाकर नाक के पास हाथ लगाकर देखा तो पाया कि साँस बराबर आ-जा रही है । नौजवान की सुन्दरता और चेहरे के भोलेपन से लगता था कि हो न हो यह कही का

राजकुमार है । लेकिन राजकुमार यहाँ क्यो लेटा है इस तरह ? उसे बडी दया आयी । झुककर उसने नौजवान के माथे पर हाथ फेरा ।

नौजवान ने धीरे से आँखे खोल दी । पहले तो उसे लगा जैसे वह सपने मे परी को देख रहा हो, लेकिन फिर धीरे-धीरे पलकें झपकाई और तब इस तरह चौककर उठ बैठा जैसे डर गया हो । वह आँख मल-मल कर परी को देखने लगा । परी ने उसकी परेशानी समझकर मुस-कुराते हुए कहा, 'राजकुमार, मैं परी हूँ तुम सपना नही, सचमुच मुझे अपने सामने खडा देख रहे हो ।'

नौजवान घबरा कर उठ खडा हुआ । पूछने लगा, 'तुम्हें कैसे पता चला कि मैं राजकुमार हूँ ? तुम्हारे साथ और कौन-कौन है और मैं कहाँ हूँ ?'

परी हँस पडी, 'राजकुमार, परी की आँखो से कुछ छिपा रह सकता है क्या ? मैं अकेली ही सैर को निकली थी और तुम्हे देखकर ही पह-चान गयी कि तुम कही के राजकुमार हो ।'

नौजवान ने निश्चितता की साँस छोडी और थका-सा बैठ गया । कुछ देर यो ही सोचता रहा फिर टूटे स्वर मे बोला, 'हाँ परी, मैं सचमुच ही राजकुमार हूँ । तुमने मुझे पहचान लिया है और तुम इतनी दयालु दिखायी देती हो, इसीलिए मैं तुम्हे बताये दे रहा हूँ । नही तो यह बताने मे भी डर लगता है । पता नही कौन राजा दुर्दमनसिंह का जासूस हो और मुझे पकडकर वहाँ ले जाये । मै जान बचाता हुआ जगल-पहाडो मे घूम रहा हूँ । राजा ने मुझे पकडने या मार डालने वाले को बहुत बडा इनाम देने की मुनादी करायी है । आज मुझे पाँच दिन भूखे-प्यासे हो गये । थक कर जब एकदम चूर हो गया तो यहाँ पडकर सुस्ताने लगा । पता नही, कब आँख लग गयी और जब उठा तो लगा, सपना देख रहा हूँ । फिर अचानक ध्यान आया कि कही आस-पास राजा के सिपाही न हो ।'

राजकुमार की कथा सुनकर परी की आँखो मे आँसू आ गये। वह उसके पास बैठ गयी और प्यार से बोली, 'मै स्वर्ग की परी हूँ, सैर करने निकली थी। यह जगह मुझे इतनी सुन्दर लगी कि नीचे उतर आयी। अचानक तुम्हारे ऊपर निगाह पडी। तुम मुझसे बिलकुल मत डरो, और सारी बातें बता दो। मुझसे जो भी सहायता बन पडेगी, जरूर करूँगी।'

परी की सारी बातो और प्यार से राजकुमार की थकान जैसे दूर हो गयी। उसने बताया, 'परी, राजा दुर्दमनसिंह मेरा चाचा लगता है। मेरे पिता, बडे महाराज उस पर बहुत विश्वास करते थे, लेकिन उसने धोखे से उन्हे मरवाकर सारा राज्य अपने कब्ज़े मे कर लिया है। और सबसे बडा डर हम दो भाइयो से है, क्योकि बडे होकर हम अपना राज्य वापस माँग सकते है। उसे पता है कि सारी प्रजा हमारा साथ देगी, क्यो कि बडे महाराज को सब बहुत चाहते थे। इसीलिए उसने हमे मरवाने मे ही अपनी भलाई समझी। जिस रात को हमारा कत्ल होना था, उसी रात को हमारे पुराने बूढे मत्री ने आकर हमे सारी बात बता दी और हमे चुपचाप रातो रात भगा दिया। अँधेरे मे ही हम शहर की खाई पार करके जगल मे आये। वहाँ मत्री के घोडे खडे थे। उन पर सवार होकर हम लोग लगातार दो-दिन और दो रात भागते रहे।'

परी ने बीच मे ही बात काटकर पूछा, 'तुम्हारा भाई कहाँ है? वह तो यहाँ कही दिखायी नही देता।'

राजकुमार ने दुखभरे स्वर मे बताना शुरू किया, 'वही तो बता रहा हूँ। जब हम राज्य की सरहद वाली नदी पार कर रहे थे तो अचानक नदी के तेज़ बहाव मे मेरे घोडे के पाँव उखड गये। मैने बहुत कोशिश की, लेकिन घोडे के साथ ही मैं भी पानी मे डूबता उतराता बहता रहा। फिर पता नही, घोडा कहाँ चला गया। मैने बहुत हाथ-पाँव मारे, चट्टानो और पत्थरो से मेरे सारे कपडे फट गये, शरीर लोहू-लुहान हो गया। खैर, जैसे तैसे किनारे आया तो थक कर इतना निढाल हो गया कि चला ही नही जाता था। हार कर यहाँ पड गया। पता

नही मेरे छोटे भाई का क्या हुआ ?' कहकर राजकुमार रोने लगा।

परी ने बडी मुश्किल से उसे चुप कराके कहा, 'राजकुमार तुम अपना मन मत खराब करो। तुम्हारा भाई जरूर कही-न कही जिन्दा है और तुम्हारी तलाश कर रहा है। हिम्मत बाँधो और अपने भाई को खोजो। मैं तुम्हारी मदद करूँगी। जब तक मैं हूँ, घबराने की कोई बात नही है।

राजकुमार बोला, 'परी, तुम्हारी बातो से मन को बडी शान्ति मिलती है। अब मुझे भी ऐसा लगता है कि मेरा भाई जिन्दा है और जरूर मुझे मिल जायेगा। पता नही, तुममे क्या बात है कि तुमसे बाते करके मेरे भीतर का सोया साहस जाग उठा है। अगर तुम मेरे साथ विवाह कर लो तो मैं अपना राज्य भी वापस ले लूंगा।' राजकुमार ने फिर सोचकर पूछा, 'तुम अपना नाम नही बताओगी ?'

'मेरे पख हस की तरह सफेद है, इसलिए स्वर्ग मे मुझे सब कोई हस-परी कहते है। परी ने मुसकुराकर जवाब दिया। कहा, 'लेकिन मुझे सिर्फ परी या हंसा कहकर बुला सकते हो।'

राजकुमार ने फिर पूछा, 'परी, तुमने मेरे साथ विवाह करने की बात का जवाब नही दिया। इस समय मैं भिखारी हूँ, लेकिन तुम साथ आ जाओगी तो सारी धरती का राज्य मुझे मिल जायेगा।'

•पहले तो परी उसकी बात पर हँस पडी, लेकिन फिर सोचते हुए बोली, 'एक परी इस धरती के राजकुमार से विवाह करे यह बात स्वर्ग मे किसी के भी गले नही उतरेगी। अगर फिर भी मैं हठ-पूर्वक तुम्हारे साथ विवाह करती हूँ तो मुझे अपने पख स्वर्ग मे वापस करने होगे।'

'मैं कभी तुम्हे तुम्हारे पखो की कमी महसूस नही होने दूंगा। तुम्हे स्वर्ग जैसा सुख देने की कोशिश करूँगा। जाने क्या बात है तुमसे मिल-कर फिर से जीवन शुरू करने की इच्छा होती है, वर्ना मैं तो सोचने लगा था कि इस नदी मे ही कूदकर आत्म-हत्या कर लूंगा।'

परी राजकुमार की बच्चो जैसी बात पर मुसकुरायी। बोली, 'अगर मेरा साथ होने से तुम्हे अपने भीतर इतनी ही हिम्मत और आशा लगती

है तो मैं तुम्हारे साथ विवाह करने को तैयार हूँ। मुझे पख लौटाने का भी कोई दुख नही है। लेकिन इसके बदले मे तुमसे एक प्रतिज्ञा चाहती हूँ।'

'क्या ?' राजकुमार का दिल धडकने लगा।

'राज्य वापस मिलने के बाद तुम एक आदर्श राजा की तरह राज्य चलाओगे। किसी के भी साथ कोई अन्याय या गलत काम नही करोगे। हर प्रजा-जन को उसका अधिकार दोगे।' परी ने कहा, 'वर्ना मै तुम्हारा मुँह नही देखूँगी। इसलिए खूब सोच-समझकर बचन देना।'

'परी, मैं वचन देता हूँ।' राजकुमार ने दृढता से जवाब दिया, 'अगर मैं ऐसा नही करूँ तो तुम मेरा मुँह देखो या न देखो, मै खुद अपना मुँह नही देखूँगा।'

'यही होगा।' परी ने सोचते हुए कहा, 'आज से जब मै और तुम एक हो रहे है तो कुछ भी तुम्हे दिखायी देगा वह मैं ही देखूँगी। जब मैं तुम्हारा मुँह नही देखूँगी तो तुम खुद नही देख पाओगे।'

उस समय राजकुमार की समझ मे परी की बात का अर्थ नही आया। उसने उतावली से कहा, मैं वचन देता हूँ .।' इसके बाद चिन्ता से पूछा, 'तुम्हे स्वर्ग और पखो की याद तो नही आयेगी ?'

परी जैसे सपनो मे खो गयी थी। धीरे-धीरे बोली, 'राजकुमार तुम बहुत सुन्दर हो। ऐसी सुन्दरता तो मैंने स्वर्ग मे भी नही देखी।'

इसके बाद परी और राजकुमार ने आपस मे प्रतिज्ञा करके बनदेवी के सामने विवाह कर लिया। परी ने प्रसन्नता-पूर्वक अपने पख स्वर्ग लौटा दिये। राजकुमार को जैसे नया जीवन मिल गया।

अब वे दोनो छोटे राजकुमार को खोजने निकले। नदी पार करके छोटा राजकुमार पहाडो मे चला गया था और वही की एक जगली

जाति के साथ उन्ही की तरह खाने रहने लगा था। वह इस तरह उनमे घुल मिल गया था कि राजा के जासूस अब उसे देखकर भी नही पहचान सकते थे। बडे राजकुमार के साथ तो परी थी, इसलिए वह उसे पहाडो मे ले गयी। उसने बताया, 'मुझे ऐसा लगता है कि तुम्हारा छोटा भाई यही-कही है।'

उन्होने वहाँ पूछ ताछ करके पता लगाया और दोनो खोजते-खोजते ठीक जगह पहुँच गये। छोटा राजकुमार जगली लोगो का वेश बनाये लकडी काट रहा था। पास ही उसका घोडा खडा था। परी की सहायता और घोडे के कारण बडे भाई ने छोटे को पहचान लिया। पहले तो छोटा राजकुमार भी डरा कि कही राजा के आदमी उसे पकडने न आ गये हो लेकिन जब उसने परी को देखा और भाई को पहचाना तो दौडकर पास आ गया, बडे भाई के चरण छुए। दोनो लिपट कर रोने लगे। दोनो यही समझे बैठे थे कि दूसरे को या तो राजा ने पकड लिया है, या मर गया है। जीवित पाकर दोनो को इतनी खुशी हुई कि देर तक दोनो एक दूसरे को छोडते ही न थे। परी ने भाइयो का यह मिलन देखा तो उसकी आँखो से भी आँसू बहने लगे। थोडी देर बाद जब दोनो शान्त हुए तो परी का परिचय छोटे राजकुमार से कराया गया—'यह हँसा परी हैं। इन्होने ही मुझे इतना साहस और ज्ञान दिया है कि मैं तुम्हे तलाश कर पाया हूँ। अब मुझे विश्वास है कि हमे खोया राज्य भी वापस मिल जायेगा। छोटे राजकुमार ने परी को प्रणाम किया और तीनो मिल-कर अपना राज्य वापस लेने के तरीके सोचने लगे।

जगली जाति के नौजवान और उत्साही लोगो को साथ लेकर उन्होने फौजें बनाने का काम शुरू कर दिया। परी ने औरतो की कई तरह की फौजे बनायी। हथियार तैयार किये गये और लडाई के नक्शे बनाये जाने लगे। इस तरह चुप-चुप उन लोगो की तैयारियाँ होती रही। परी की सुन्दरता, सूझ-बूझ और प्यार ने वहाँ के सारे लोगो का दिल जीत लिया। इन तानों की वहाँ बडी इज्जत थी। पहाड के लोगो को

लगता था, जैसे राम-लक्ष्मण और सीता ही फिर से वहाँ आ गये है और उनकी सहायता करना उनका धर्म है ।

कई बार परी और उसकी साथिने बजारो का वेश बनाकर पहले ही सारे राज्य का चक्कर लगा आयी थी । उन्होने वहाँ की प्रजा मे यह फैला दिया था कि एक दिन राजा दुर्दमनसिंह के राज्य पर हमला होगा और राज्य के असली हकदार अपना राज्य वापस लेगे । प्रजा दुर्दमनसिह के अत्याचारो से बडी दुखी थी । राजा ऐयाश था और इसी के लिए खजाना भरवाया जाता था । उसने प्रजा पर तरह-तरह के कर लगा दिये थे । बदले मे किसी को कोई सुख-सुविधा देने की बात ही उसके दिमाग मे नही आती थी । प्रजा भूखी है या बेघर, इस बात की चिंता राजा को नही थी । उसे तो अपने ही आराम और ऐयाशी से फुरसत नही मिलती थी । सारे समय चापलूसो और खुशामदियो से घिरा रहता था । मत्रियो से लेकर प्यादो तक उसके सारे कर्मचारी भी एक सिरे से झूठे, मक्कार और स्वार्थी थे । राजा के सामने भले बने रहने और उन्नति पाने के लिये मनगढत बाते और योजनाएँ बनाया करते थे । ज्यादातर दुश्मन-राज्यो से मिले थे और वहाँ खबरे पहुँचाकर अपना घर भरा करते थे । राज्य भीतर से एकदम खोखला और जर्जर हो गया था । बजारिनो की बातें सुनकर लोगो को विश्वास हुआ कि शायद अब उसके दिन फिरेंगे । बडे- बडे सेनापतियो और सरदारो को उन्होने लालच देकर अपनी तरफ मिला लिया ।

इसीलिये जब दोनो राजकुमारो ने अपनी फौजो के साथ राज्य पर हमला बोला तो सारी प्रजा और ज्यादातर कर्मचारियो ने उनका साथ दिया । जिन गिने-चुने लोगो ने राजा की मदद भी की वह किसी स्वामि-भक्ति के कारण नही, बल्कि अपनी जागीरे और जान बचाने के लिए । यह भी सोचा अगर राजा जीत गया तो उनकी पौ बारह हो जायेगी । लेकिन प्रजा ने ही उन्हे और राजा को पकडकर ठिकाने लगा दिया । उन्हें बीच चौराहो पर पेडो से लटका कर फासियाँ दे दी गयी । जब

बडी शान-शौकत और गाजे-बाजे के साथ दोनो राजकुमार विजय का डका बजाते हुए राजधानी मे आये तो वह दृश्य देखकर उनको बडा दुख हुआ। वे राजा से नाराज ज़रूर थे, लेकिन वह उनका चाचा था, इसलिये उसे मारने की नही, पकड़कर कैद कर देने की बात ही वह सोचते थे।

इसके बाद बडे ज़ोर-शोर से राज-तिलक की तैयारियाँ हुई। जगली जाति के लोगो को सेना और शासन के बडे-बडे पद दिये गये। उन्होने मुसीबत मे राजकुमारो का साथ दिया था। खूब जागीरें और धन दौलत बाँटी गयी। बडा राजकुमार अब राजा बना और छोटा प्रधान-मत्री और सेनापति। उन्होने सारे राज्य की कमज़ोरियो और कमियो को एक सिरे से दूर कर दिया। सारी प्रजा उन्हे राम-लक्ष्मरण और सीता की तरह ही प्यार करती थी। लगता था जैसे अयोध्या का राज्य उन लोगों के हाथ मे आ गया

परी को कभी-कभी स्वर्ग की याद आया करती थी। तब वह बहुत दुखी और बेचैन हो जाती। उसका मन उडकर लम्बी-लम्बी सैर करने को होता, लेकिन पख उसने लौटा दिये थे। दोनो राजकुमार अक्सर शिकार और सैर को उसे अपने साथ ले जाया करते थे, लेकिन उसका मन नही बहलता। उन्होने उसके लिये एक सतखण्डा महल बनवा दिया था। महल को बडे-बडे कारीगरो ने बडी मेहनत से बनाया था और दूर से देखने पर एक बडे कमल के फूल जैसा दिखायी देता था। नीचे की सारी मजिलें उसकी नाल लगती थी, और सबसे ऊपर का हिस्सा हजार पखुडियो वाले कमल जैसा लगता था। ऊपर ही फव्वारे लगे थे, सगीत के लिये बडे-बडे कमरे थे। लेकिन जब परी को स्वर्ग की याद आती तो उसे कुछ भी अच्छा नही लगता। सारा राज-पाट, ठाट-बाट, दासी-बाँदियाँ, नौकर-

चाकर, झाड फानूस, गहने ज़ेवर, महल अटारी, इत्र-फुलेल, नाच-गाना, खेल-तमाशे, कुछ भी उसका मन नही बहला पाते और वह सतखण्डे महल के नीचे बने तहखानो मे जाकर बन्द हो जाती। वह जैसे ही तहखाने मे जाती कि सारे महल मे तहलका मच जाता। दोनो राजकुमार सारा राज-पाट और दरबार छोडकर भागे आते और बडी कठिनाई से तह-खाने के दरवाज़े खुलवाते। जब योगिनी का वेश बनाये परी बाहर निकलती तो उन्हे सचमुच बडी दया आती। दोनो समझते थे कि परी को स्वर्ग की याद आती होगी। परी को यो उदास देखकर उन्हे बडा दुख होता। उसकी वे लोग बहुत इज्जत करते थे, उसके कारण ही तो उन्हे खोया राज्य वापस मिला था। वे उसे लेकर सैर करने चले जाते। जब खुश होती तो दोनो को बडा सतोष मिलता।

परी जब खुश होती तो कहा करती—'तुमने मुझे सारी सुख-सुविधा, इज्ज़त, सम्मान दिये है, फिर भी पता नही मुझे क्या हो जाता है। जब भी स्वर्ग की याद आती है तो सारी दुनियाँ बेकार लगती है, कुछ भी अच्छा नही लगता और मन होता है कि कही एकात मे बैठकर रोती रहूँ। मुझे लगता है कि मै यहाँ एकदम अकेली हूँ और मेरा कोई भी साथी नही है।' यह सब सुनकर राजा को जहाँ चिता होती, मन मे सतोष भी होता। अच्छा हुआ कि परी को अपने पख लौटाने पडे, नही तो वह ऐसे समय ज़रूर स्वर्ग चली जाती। पता नही, फिर लौटकर आती भी या नही। परी के बिना अपने जीवन की वह कल्पना भी नही कर सकता था। तब उसकी जिंदगी एकदम सूनी हो जाती और वह हो सकता है सब कुछ छोड-छाड कर सन्यास ले लेता। उसे विश्वास था राज्य मे सारी इज्ज़त और व्यवस्था परी के ही कारण है।

मत्रियो ने सलाह दी कि अगर छोटे राजकुमार विवाह कर ले तो छोटी रानी के साथ परी का मन लग जायेगा। उन्हे एक सहेली मिल जायेगी। इतने बडे महल मे बेचारी अकेली रहती है। बात छोटे राज-कुमार से कही गयी तो उसने एकदम इन्कार कर दिया। उसने बताया

कि उसकी इच्छा कभी भी विवाह न करने की ही है। 'मैं तो यो ही जीवन-भर बडे भाई और भाभी की सेवा करना चाहता हूँ। कोई काम ऐसा नही करूँगा कि मेरा ध्यान इनकी सेवा मे हटे।' हारकर बडा राजकुमार कोई और तरकीब सोचने लगा। उसने बडे-बडे ऋपिओ और महात्माओ के दर्शन किये।

फिर मारे राज्य मे इस सूचना से खुशी की लहर दौड गयी कि परी ने दो जुडवा सतानो को जन्म दिया है एक पुत्री और एक पुत्र। पुत्र राजकुमार जैसा था और पुत्री परी जैसी। घर-घर मे उत्सव मनाये गये, सजावटे हुई। दीवाली की तरह दीपक जले और अबीर की तरह लोगो ने एक दूसरे पर फूल बरसाये। एक दूसरे के गले लगे। राजा ने सारा खजाना ही सारी प्रजा मे बॉट दिया। कर्मचारियो के वेतन और सम्मान बढाये गये। विद्वानो की सभाएँ हुई और पुत्र का नाम विवेक और पुत्री का करुणा नाम रखे गये।

धीरे-धीरे दोनो बडे होने लगे। उनकी शिक्षा-दीक्षा और खेल-कूद मे ही परी का अधिकाश समय निकलने लगा और उसे स्वर्ग की याद भी अब कम आने लगी। राजा भी अब अपना सारा समय परी और बच्चो की ही सगति मे बिताने लगा। राज्य का ज्यादातर काम अब छोटा-राजकुमार ही देखने लगा।

एक दिन परी ने देखा कि राजा के चेहरे पर बडी बेचैनी छायी हुई है। वह बहुत घबराया हुआ सतखण्डे की छत पर इधर से उधर अकेला चक्कर लगा रहा है। उसके मन को शान्ति नही है। चेहरे पर एक भाव आता है, एक जाता है। परी ने देखा तो डर गयी उसे लगा कि आज जरूर कोई अनिष्टकारी बात है। उसने पूछा—'आज क्या बात है, तुम बहुत परेशान दिखायी दे रहे हो ?'

राजा इस तरह चौक गया जैसे चोरी करते पकडा गया हो। उसने मन का भाव छिपाते हुए कहा—'नही तो, कोई भी बात ऐसी नही है'।

दोनो बच्चे किधर चले गये ? जरा उनका ध्यान रक्खा करो ।' परी को उसकी बात मे कुछ अजब सी ध्वनि लगी उसने राजकुमार की आँखो मे झाँक कर पूछा 'कोई खास बात है क्या ? तुम जरूर कोई बात छिपा रहे हो । तुम जानते हो, मैं परी हूँ और मुझसे कोई बात छिपी नही रह सकती ।

राजा पहले तो घबराया, पर तभी उसे खयाल आया कि परी झूठ बोल रही है । अब वह परी नही, साधारण रानी है । गुस्से से बोला, तुमसे जो कुछ कहा गया है, उतनी बात ध्यान रक्खो । बेकार मेरी चीजो मे टाँग अडाने की कोशिश मत करो। राजकाज के बीसियो मामले हैं, सभी तुम्हे बताये जाये यह ज़रूरी तो नही है। तुम बच्चो का खयाल रक्खो ।

परी ने गौर से देखा—क्या यह वही राजकुमार है ? उसे राजा का चेहरा भी बदला-बदला नज़र आया । उसने दृढता से कहा, 'इतना मैं भी समझती हूँ, कि यह राज-काज का मामला है । जब-जब भी कोई परेशानी की बात आयी है, तुमने हमेशा मुझे बताया है । इस बार भी मैं शायद कोई हल निकाल सकूँ । राजकुमार तुम मुझे बदले हुए दिखायी दे रहे हो ।'

राजा झुँझलाकर भडक उठा, 'बदलूँ नही तो क्या वही पहले वाला बच्चा बना रहूँ ? मैंने कह दिया न कि यह मामला तुम्हारे जानने का नही है। तुम नीचे जाओ और अपना काम देखो । मैं आज ही उसे ठिकाने लगा दूँगा ।'

परी चौंकी, लेकिन उसने शान्त भाव से राजा के पास आकर उसके कन्धे पर हाथ रखकर पूछा, 'राजकुमार, किसे ठिकाने लगाने की बात सोच रहे हो ?'

राजा ने सोचा कि क्या वह एक भी काम अपने मन से नही कर सकता ? हर बात की सूचना उसे परी को देनी होगी ? तब तो वह

केवल कठपुतला रह गया, असली राज-काज तो परी के हाथो मे ही रहा। उसने दूर जगल की ओर देखते हुए दाँत पीसे—'मैंने कहा न, मेरी बात मे मत बोलो। जो गलती मैंने अपनी सारी बाते उस नीच को बताकर की है, अब उसे नही दुहराऊँगा। बडा साधु बनता है, जिन्दगी भर मेरी सेवा करने की बात कहता है। अब मेरे साथ ही धोखा कर रहा है। सच है, राजकाज मे किसी का विश्वास नही करना चाहिये।'

'किसके विश्वासघात की बात कर रहे हो? कौन है वह? छोटे राजकुमार?'

'हाँ-हाँ वही, मुझे पता चला है कि सेना के साथ मिलकर वह मेरा तख्ता पलटना चाहता है। मेरे खिलाफ पडौस के देशो से सहायता ले रहा है। कौन किसका भाई है। मै तो आज ही उसे ठिकाने लगाता हूँ।'

परी ने उसे समझाना चाहा, 'नही राजकुमार, किसी ने तुम्हे गलत खबर दे दी है। मुझे भी तो एक बार छोटे राजकुमार से बाते कर लने दो। मुझे तो लगता है कि वह सचमुच साधु है। राजकुमार, ऐसा कोई काम न कर बैठना कि जिन्दगी भर को पछताना पडे।'

'हाँ हाँ, तुझे तो सब साधु लगते है। मुझे उपदेश देने की एकदम जरूरत नही है। मुझे किसी ने गलत खबर नही दी। मैं आज ही रात को उसके टुकडे-टुकडे कराके फेंकता हूँ। सारा इन्तजाम पक्का हो गया है।' राजकुमार राक्षस की तरह हँसा।

परी भीतर से दहल गयी, लेकिन हिम्मत करके बोली, 'राजकुमार, जब तक छोटे राजकुमार से मैं नही मिल लूँगी तुमको ऐसा नही करने दूँगी। अगर ऐसा किया तो मै सारी प्रजा को बता दूँगी कि तुम हत्यारे हो...।'

राजा का हाथ तलवार पर चला गया, 'हाँ, तुझे मुझसे क्या लेना-देना? तू तो स्वर्ग की रहने वाली है न। लगता है तू भी उस नीच से मिली हुई है। वह मुझे मारकर राजा दुर्दमनसिंह की तरह राज्य करना

चाहता है। मेरे बाद वह मेरी सन्तान को छोडेगा ? मेरे पिता, बडे महाराज ने छोटा भाई समझकर विश्वास करने की जो गलती की थी मैं उसे दुहराने नही दूँगा। मै साँप को दूध पिला कर क्यो पालूँ ? मैं आज ही रात उस हत्यारे की हत्या कर दूँगा। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।'

अब परी ने निडर भाव से जवाब दिया, 'छोटे राजकुमार ने मुसीबत मे जिस तरह साथ दिया है, तुम उसकी बात भी तो सोचो। तुम्हारे चाचा ने जो किया वह सारे छोटे भाई करें, यह कोई नियम नही है। वे चाहते तो क्या उसी समय अपना राज्य अलग नही बना सकते थे ? देखो राजकुमार मैंने तुमसे विवाह करते समय कहा था कि तुम कोई गलत काम करोगे तो मै तुम्हारा मुँह नही देखूँगी। मुझसे तुम्हारा मुँह नही देखा जा रहा। पहले तुम मुझे अपने बच्चो को लेकर जहाँ मेरा मन हो निकल जाने दो, इसके बाद जो मन हो सो करना।'

'लगता है तुम्हारे भी पर निकलने लगे है। तुम भी उससे मिल गयी हो। उसने तुम्हे जो भी लालच दिया हो लेकिन याद रखना कि बच्चो को बिलकुल जिन्दा नही छोडेगा।' राजा का चेहरा अविश्वास और गुस्से से भयानक हो गया।

परी अपमान से तिलमिला उठी। 'मुझसे तुम्हारा मुँह देखा नही जा रहा राजकुमार, एकदम राक्षस का मुँह हो गया है। दाँत बाहर निकल आये है, आँखो मे खून उतर आया है .' और परी एकदम मुड़कर तहखाने की ओर दौडी।

'ठहर अभी तुझे राक्षस का मुँह दिखाता हूँ।' राजा नगी तलवार लिये हुए उसके पीछे दौडा। उस समय न उसे अपने भले का होश था न बुरे का। वह पागल हो गया था।

परी ने भागकर भीतर से तहखाने का दरवाज़ा बद कर लिया। पहले तो राजा दरवाज़े को ठोकरो और घूसो से पीटता हुआ उसे गालियाँ

देता रहा और चीख-चीखकर परी को निकल आने को कहता रहा। भीतर से परी बस यही कहती थी, 'मुझे अपना राक्षसी चेहरा मत दिखाओ।' उसका मन हुआ कि तहखाने मे आग लगवा दे। लेकिन उसने एक भारी-सा ताला लेकर बाहर लटका दिया और लौहार-बढई बुलाकर बाहर से बडे-बडे लट्ठे ठुकवा दिये। कोई उसे फिर खोलकर न निकाल ले, यह सोचकर उसने ताली नदी मे फिकवा दी।' इस हरामजादी की यही सज़ा है। अब मैं खुद भी कभी नही खोल पाऊँगा। उस समय उसके मन मे बडी खुशी हुई कि परी ने अपने पख लौटा दिये थे, वर्ना इस समय वह कही यो हाथ आती और वह यो इस बदतमीज़ी की सज़ा दे पाता ? तब तो वह उडकर स्वर्ग चली जाती अब अच्छी तरह से स्वर्ग जाना परी को भी तो मालूम हो कि कोई उसे सज़ा दे सकता है। और दॉत पीसता हुआ वह ऊपर आ गया मगर कुछ देर उसे लगता रहा जैसे परी के रोने की आवाज़ उसके पीछे-पीछे चली आ रही है।

ऊपर जाकर उसने तय कर लिया कि सारा इन्तज़ाम उसे अभी ही कर लेना है। तभी सेवको ने आकर सूचना दी कि पुत्र विवेक और पुत्री करुणा का कही पता नही चल रहा है। सारा महल छान डाला गया, राजा अपने खास सिपाहियो को लेकर छोटे-राजकुमार के महल मे पहुँचा और चारो ओर घेरा डालकर अन्दर पहुँचा। उसे बडा आश्चर्य हुआ कि वहाँ छोटा राजकुमार भी नही था। भूखे शेर की तरह राजा ने एक-एक कमरा, तहखाना, खिडकी दरवाजे, छत और मीनारे सब देख डालीं, लेकिन न कही छोटे राजकुमार का पता चला न पुत्र-पुत्री का। इसका मतलब कि तीनो ही साथ गायब हो गये है। पता नही पुत्र और पुत्री अभी तक जीवित है या ठिकाने लगा दिये गये। दुख और गुस्से से राजा आपे से बाहर हो गया। सेवको और पहरेदारो से पूछ-ताछ की गयी, उन्हे मारा पीटा गया, लालच और प्रलोभन दिये गये, मगर कोई नतीजा नही निकला। केवल इतना पता चला कि जब परी और राजा सतखण्डे पर बाते कर रहे थे तभी एक बहुत पुरानी दाई नीचे खडी थी। हो न

हो, उनके भागने मे इसका जरूर हाथ है। जाँच पडताल से यह भी मालूम हुआ कि वहाँ से भागकर दाई छोटे राजकुमार के यहाँ गयी थी। शक पक्का हो गया। बहुत कोशिशो के बाद भी जब दाई ने कुछ नही बताया तो गुस्से से अन्धे राजा ने उसे हाथी के पाँव के नीचे कुचलवाकर मरवा डाला।

सन्तान की याद और फिक्र मे राजा कई दिनो बहुत दुखी रहा, चुपचाप रोया भी। जरूर छोटे राजकुमार ने उन्हे मार दिया है, लेकिन वह भागकर कहाँ गया है, इसका पता कैसे चले। उसने जासूस छोडे, इनाम की मुनादी कराई कि जो भी छोटे राजकुमार को जिन्दा या मरा हुआ ला देगा उसे मालामाल कर दिया जायेगा। जरूर वह किसी दुश्मन के साथ मिलकर राजा पर हमला करने की योजना बना रहा होगा। राजा ने सैनिको के दल के दल सरहदो पर पहुँचवा दिये, चौकियो के पहरे कडे कर दिये गये। कुछ लोग है जो उसके राज्य मे उसके खिलाफ काम कर रहे है यह भय उसे चौबीसो घण्टे सताने लगा। समझ मे नही आता था कि क्या करे।

भीतर से राजा इतना डर गया था कि उसने फौरन ही फौजो को तैयार होने का हुक्म दिया। खजाने का अन्धाधुन्ध रुपया खर्च करके हथियार बनाने के नये-नये कारखाने चालू किये गये। बीस साल से ऊपर के सारे नौजवानो को ज़बर्दस्ती फौज मे भरती कर लिया गया। जिस पर ज़रा भी शक होता या जो ज़रा भी विरोध करते उन्हे या तो मरवा डाला जाता या पकडकर जेल मे ठूस दिया जाता। लम्बी सेवा के बाद जिन सैनिको और सेनापतियो को पेन्शने दे दी गयी थी। उन्हे वापस बुला लिया गया। जरूर पडौस के किसी राजा ने छोटे राजकुमार को अपने यहाँ शरण दी है और अब किसी भी समय उस पर हमला हो सकता है यह सोचकर उसने खुद ही पडौस के सबसे बडे राज्य पर हमला बोल दिया।

पडौसी राज्य इस हमले के लिये तैयार नही था। वहाँ के लोग इस अचानक मुसीबत से ऐसे घबरा गये कि ठीक से अपना बचाव भी नही कर पाये। थोडी बहुत लडाई हुई। राजा वीर और योग्य तो था ही, उसने लडाई जीत कर राज्य पर अपना अधिकार कर लिया। वहाँ का राजा मार डाला गया, लेकिन छोटे राजकुमार का वहाँ भी कोई पता नही चला। तब राजा ने दूसरी सरहद के राज्य पर हमला किया और उसे भी जीत लिया। आखिर वे सब गायब कहाँ हो गये, इस गुस्से और जीत के नशे मे चूर हमलो पर हमला करता गया। इस तरह उसका राज्य बढता गया और वह चक्रवर्ती सम्राट कहलाने लगा।

लेकिन हर राज्य को जीतने के बाद उसे लगता था कि कही तह-खाने से किसी के रोने की आवाज़ आ रही है, मानो उससे कोई कहता रहता था—'राजकुमार, तुमने मेरी और मेरे बेटे-बेटी की क्या हालत कर दी ?' और इस आवाज़ को न सुनने के लिये वह फिर नया हमला कर देता। इस तरह भाग-दौड और लडाई-चढाई मे न तो उसे पुत्र-पुत्री की याद करने की फुरसत मिलती और न परी की रोती आवाज़ सुनायी देती। सारा दिन घोडे-हाथियो पर और सारी रात मन्त्रियो के साथ सलाह-मशवरे या घायलो की चीखो, कैदियो की फरयादें सुनने मे ही बीत जाती। मन मे उसे विश्वास हो गया कि वे लोग या तो कही जगल मे जाकर मर-मरा गये या किसी ने उन्हे मार डाला। नये-नये राज्य, धन-दौलत फैलती हुई कीर्ति और ताकत के मद मे उसे अब ध्यान भी नही आता था कि उसके कोई पुत्र-पुत्री भाई या पत्नी भी थे। बस, कभी जब वह थक कर सो रहा होता तो उसे ऐसा लगता जैसे किसी की कराहने की आवाज़ आ रही है। और जब आँखे खोलता तो कोई भी नही होता। फिर उसे नीद नही आती। अब उसके राज्य के तीन ओर समुद्र और चौथी ओर पहाड थे, इसलिये आगे जीतने का भी कोई सवाल नही था।

अब उसे लगता जैसे करने के लिये कोई काम ही नही रह गया।

मन बहुत उदास और ऊबा रहता। एक बार मत्री ने समझाया—'महा-राज, अब जो हुआ उसे भूल जाइये । राज-काज मे बहुत कुछ अच्छा और बुरा भूलना पडता है। कोई अच्छी-सी सुन्दरी देखकर पुन विवाह कीजिए, ताकि वश आगे बढे और युवराज आये।' सम्राट को आज-कल बडी थकान लगती रहती थी, और ऐसा महसूस होता रहता जैसे वह बूढे हो गये हो। मत्री की बात पर उन्होने विचार किया और सोचा शायद इससे उदासी कुछ कम होगी वर्ना हमेशा कही हल्की-सी वही आवाज सुनायी देती रहेगी और उन्हे हमेशा लगता रहेगा जैसे अपनी पत्नी, पुत्र-पुत्री और भाई को उन्होने अपने हाथो से मार दिया है। विवाह किससे किया जाये ? इच्छा हुई कि शीशे मे देखे कि इस विजय और साम्राज्य की थकान ने उसको कैसा बना दिया है ? उसने शीशा मँगवाया, मुँह के सामने किया .थोडी देर आँखे फाडकर शीशे मे देखता रहा फिर आश्चर्य और अविश्वास से उसका मुँह जैसे खुला रह गया शीशे मे चेहरे की कोई परछाँई ही दिखाई नही देती थी। इधर-से देखा, उधर से देखा लेकिन शीशे मे कोई छाया नही थी। शीशा हाथ से छूटकर नीचे जा गिरा...यह क्या हो गया ? उसकी परछाँई क्यो नहीं दीखती ? घण्टो सम्राट यो ही लकवा मारा सा बैठा रहा, न कुछ सोचा, न अनुभव किया।

फिर धीरे-धीरे उसे खयालो ने आ घेरा। याद आया कि तहखाने की तरफ भागते हुए परी ने कहा था कि 'मुझ से तुम्हारा मुँह नही देखा जा रहा राजकुमार, एकदम राक्षस का मुँह हो गया है, दाँत बाहर निकल आये हैं, आँखो मे खून उतर आया है...' क्या सचमुच मेरा मुँह राक्षस का मुँह हो गया है ? हो सकता है उस बार शीशा देखने मे कोई गलती हो गयी हो। सम्राट ने दुबारा शीशा उठाया, आँखें मली लेकिन इस बार आश्चर्य और अविश्वास से नही, भय से उसकी साँस रुकी रह गयी, सचमुच वहाँ कोई परछाँई नही दिखाई देती थी . शीशे मे परदे, दीपदान, दरवाजे आसमान सब दीखता था, लेकिन सम्राट का चेहरा नही झाँकता था। डर से उसकी चीख निकलते निकलते रह गयी

..उसने चोबदार को आवाज लगायी । और जब सब लोग आस-पास जमा हो गये तो सहसा होश आया । किसी तरह कुछ कह कर सम्राट ने उन्हे हटाया, कहा कि उनकी तबियत अचानक खराब हो गयी है। फौरन राज्य भर के वैद्य-हकीम बुला लिये गये । उन्होने बहुत तरह जाँच पडताल की, लेकिन राजा को कोई रोग होता तो वे बताते । फिर भी अपनी-अपनी योग्यता जताने को उन्होने दुनियाँ भर की बीमारियाँ सम्राट मे बतायी और हज़ारो तरह के उपचार, दवाइयाँ इकट्ठे कर दिये गये । सम्राट ने झुँझलाकर सबको भगा दिया । वह किसी को क्या बताता कि जो बात उसके दिल मे पूरी ताकत से फेके गये भाले की तरह गड गयी है, वह क्या है ? शीशे मे उसकी कोई परछाँई नही पडती । अब वह कैसे मालूम करे कि खुद कैसा लगता है ?

जब सब लोग उसे आराम करने को छोड कर चले गये तो सम्राट को डर लगने लगा । यह अनहोनी बात हुई कैसे ? क्या सचमुच उसका मुँह राक्षस का मुँह हो गया है ? कैसे पता चले ? किससे पूछे ? यह बात पूछी भी तो नही जा सकती ! वह सम्राट है अपनी कमज़ोरी को दूसरो के सामने उजागर भी तो नही कर सकता । क्या परी ने सच ही कहा था कि 'तुम अपना मुँह खुद भी नही देख सकोगे ?' तो क्या उसने कुछ गलत किया है ?

उसने अकेले रहना बद कर दिया । हमेशा वह शराब और नाच-रग मे डूबा रहने लगा । वह अकेला रह नही पाता था और दूसरो के सामने मुँह दिखाते शर्म आती थी । किसी को भी नही मालूम कि उसके साथ कैसी भीषण बात हो गयी है । उसे भीतर ही भीतर बेचैनी खाये जाती थी कि उसकी छाया शीशे मे नही पडती । समझ मे नही आता कि करे तो क्या ? ऐसा तो न किसी के साथ देखा, न सुना । मन मे यही बात उसके ऊपर भूत की तरह सवार थी कि उसके साथ बडी भयानक घटना हो गयी है । न मालूम कैसे उसे यह भी विश्वास हो गया था कि तहखाने

मे उसने परी को ही बद नही किया। पुत्र और पुत्री को भी बद कर दिया है, अपने हाथो से उन्हे मार दिया है। इच्छा होती कि तहखाना खुलवाये और जाकर देखे कि उसमे कौन-कौन हैं। उसे मालूम था कि परी दो-तीन दिनो मे ही भूखी-प्यासी मर गयी होगी, अब तक उसके ज़िदा रहने का कोई सवाल ही पैदा नही होता। मगर फिर भी उसे लगता कि हो न हो वह अभी तक जिदा है और उसे तहखाने की तरफ देखने या उसकी बात सोचने मे भी डर लगता।

एक बार उसने बहुत घुमा-फिरा कर यह बात अपने मत्री से पूछी—'मत्री, क्या हम अब अपने चेहरे से बहुत बदले हुए लगते है ?' उसकी हिम्मत नही हुई कि पूछे कि क्या मैं राक्षस जैसा लगता हूँ ?

मन्त्री ने फौरन ही जवाब दिया—'नही महाराज, आप चक्रवर्ती सम्राट है। आपके तेज के सामने बडे-बडे राजा-महाराजा सिर नही उठा पाते। कोई आँख नही मिला पाता। आपका मुख साक्षात् इन्द्र का मुख है...!'

'बकवास बद करो।' सम्राट ने उसे डाँट दिया और किसी तरह गुस्से को पी गया। मन हुआ कि अभी इसे सूली पर चढा दे...झूठा, चापलूस। यह बदमाश अपनी जान के डर से सच नही बोल सकता कि मेरा मुँह राक्षस का मुँह हो गया है। अब सम्राट को लगने लगा कि चापलूसी और खुशामद मे सब लोग उससे झूठ बोलते है, सच बात कोई नही बताता। ये लोग हर मामले मे झूठ बोलते होगे। सब जाल-साज झूठे और मक्कार हैं। जब विभागो के मन्त्री, राज्य के कर्मचारी और सेवक आकर सम्राट को सूचना देते कि चारो तरफ किस तरह की खुशहाली, सुख-चैन और व्यवस्था है और सारी प्रजा कैसे सम्राट की जय-जयकार कर रही है और उन्होने अपने राज्य का प्रबन्ध कितने योग्य व्यक्तियो पर छोड रखा है तो सम्राट को याद आ जाता कि ये सब के सब एक सिरे से झूठे हैं। सिर्फ अपनी तारीफ तरक्की और धन लेने के लिये ये सब मन-गढत बातें करते हैं। सम्राट को लगने लगा कि वह एक-

दंम मक्कार लोगो से घिरा हुआ है और कोई भी उसका सच्चा मित्र नही है। वह बहुत ही अकेला है।

आखिर सम्राट क्या करे ? कोई भी तो उसे नही बताता कि उसका चेहरा कैसा है ? अपना चेहरा उसे दिखायी नही देता। वह सुन्दर लगता है या कुरूप, वह राक्षस दीखता है या देवता, वह बूढा लगने लगा है या जवान. .इस बात को जानने का कोई तरीका उसके पास नही है। किसी से पूछो तो वह सच नही बताता । सब सम्राट का मन और अपना स्वार्थ देखकर बाते करते है। फिर दूसरो के बताने से कही अपने चेहरे के बारे मे पता चलता है ? वह तो खुद ही देखकर जाना जा सकता है। और चेहरा है कि दिखायी नही देता। शराब या पानी पीते समय आँखे अपने आप एकदम बद हो जाती, उसे मालूम था कि उसकी परछाँई पानी मे नही पडेगी। वह भूले से भी किसी शीशे के सामने से नही गुजरता। यहाँ तक कि उसने नहाना बद कर दिया... कही पानी मे झाँके और पाये कि उसकी तो कोई परछाँई ही नही पडती। जो बात आज सिर्फ उस तक छिपी है, कल उसे सारे सेवक-कर्मचारी जान जायेंगे। लेकिन लगता कि मन की यह बेचैनी उसे पागल बना देगी। उसे हमेशा ऐसा महसूस होता कि वह कही गहराई मे डूबा जा रहा है और उसकी साँस घुट रही है।

इस पागलपन से बचने के लिये उसने लम्बे-लम्बे शिकारो पर जाना शुरू कर दिया, एक से एक भयानक खेल-तमाशे अपने राज्य मे शुरू कराये ताकि मन इन्ही मे उलझा रहे और इस बात का ध्यान ही न आये कि उसकी परछाँई नही दिखाई देती। उसे निहत्थे आदमी और शेर की लडाई देखना बडा अच्छा लगता; जब गुलाम एक दूसरे के शरीर मे भाले घोपकर मारते, ज़िदा अपराधियो को गडवा कर कुत्ते छुडवाये जाते या उन्हें जजीर से बाँध कर हाथी से घसिटवाया जाता, गाँव जलाये जाते तो उसका मन बहला रहता, वह जोश मे आ जाता और कभी खिलखिला कर हँस पडता। तभी उसे लगता जैसे जोश में उसका चेहरा

राक्षस का हो गया है, उसकी हँसी राक्षस की हँसी है। उसकी हँसी एक-दम बीच मे रुक जाती और सारा जोश ठडा पड जाता । उसे कौन बताये किस वक्त वह कैसा लगता है ? और तब वह अपने हार, मुकुट, मणिबन्ध सब इस तरह उतार कर फेक देता जैसे ये सब उसका गला घोट रहे हो ।

उसकी हालत बुरी होती जा रही थी । खाना खाते-खाते उसका हाथ रुक जाता और उसे कही से परी की कराह सुनायी देने लगती । रात-रात भर नाच-गाना देखते वक्त अचानक उसे खयाल आ जाता कि आस-पास के शीशो, भाड फानूसो मे हर आदमी की परछाँई, दप्-दप् झिलमिलाती है, केवल उसकी परछाँई नही है और तब बेचैन होकर अकेले मे चला जाता । लेकिन अकेलापन पाते ही उसे डर लगने लगता, झूठे और मक्कार लोगो से घिरे हुए वह कब तक अपने को सुरक्षित अनुभव कर सकता है ? पता नही कब कौन मार दे, उसे जहर दे दे या बाहर के दरवाज़े लगाकर ताला डलवा दे । इसके साथ ही सबमे ज्यादा डर उसे अपने आप से लगता ।

एक दिन उसके दरबार मे एक साधु पकडकर लाया गया । जटा-जूट बढाये, हाथ मे कमडल लिये खडाऊँ खटखटाता वह रस्सो से बाँधकर दरबार के सामने पेश किया गया । अधिकारियो ने बताया कि यह राज्य का प्रसिद्ध डाकू है और आजकल साधु का भेस बनाकर प्रजा को ठग रहा है । सम्राट ने देखा कि पूरे साधु का ढोग था । पहले तो उसे शक हुआ कि यह कही छोटा राजकुमार तो नही है । लेकिन काफी जाँच-पडताल के बाद पाया गया कि नही, यह छोटा राजकुमार नही है । सारी सभा की राय हुई कि इस ढोगी को सीधे फाँसी पर लटका देना चाहिये । सब लोग खुश भी थे कि जब इसे सूली पर लटकाया जायेगा या जलाया जायेगा तो राजा का एक दिन का मनोरजन होगा । सम्राट ने पूछा—'बदी, तुमने यह ढोग क्यो किया ?'

कुछ भी नही है। मन होता है कि कही से फिर वही किसान वाली शक्ल मिल जाय तो उसे लगा लूँ। लोग अपने-अपने दुख और आशाए लेकर मेरे पास आते है तो मैं उनकी बातें नही सुनता, सिर्फ अपनी पुरानी शक्ल खोजता हू।'

सम्राट ने आज्ञा दी की साधु को छोड दिया जाये। इस आदमी को अपना चेहरा दीखता है, सम्राट को तो वह भी नही दीखता। मालूम नही, सम्राट के नाम से बैठा यह आदमी कैसा दिखायी देता है ?

फिर सम्राट को लगने लगा कि वह कोई और है और सम्राट का चेहरा लगाये यहाँ बैठा है। छोटे राजकुमार की तरह वह भी किही से भागा हुआ आदमी है और यहाँ आकर सम्राट बन गया है। किसान तो भरी सभा मे कह सकता है कि वह भागकर डाकू बन गया था, अब साधु बन गया है। सम्राट तो किसी के सामने सच बात कह भी नही सकता कि वह तो नकली सम्राट है और असली व्यक्ति को तो उसने कही तहखाने मे भूखा-प्यासा बद कर रखा है। लोगो को जो कुछ मालूम है, एकदम भूठ है। आस-पास के धोकेबाजो और भूठो को सच बात बताकर वह क्यो खतरा मोल ले अब तो जैसे वह भूठा है, वैसे ही आस-पास वाले है। कोई भी तो उसका सच्चा साथी और मित्र नही है। यहा तो कब किस तरफ से छुरा आकर उसे लगे और अगले दिन उसकी जगह कोई और सिंहासन पर बैठा हो। सच्ची मित्र और साथी तो परी थी सो

और जब किसी तरह भी नहीं रहा गया तो बहुत हिम्मत करके उसने तहखाने के लट्ठे हटवायें, ताले तुडवाये। बडी मुशिकल से दरवाजा खुला। राजा ने देखा और चौंक कर उछल पडा-लगा जसे परी अपने पलग पर गहरी नीद में सो रही है, मानो अभी-अभी सोयी है। खुशी से चीखकर राजा पलंग की ओर दौडा तो परी की आखें खुल गयी। हसती हुई कह उठी---'मुझे मालूम था कि मुझे मनाने तुम एक दिन फिर जरूर आओगे-

राजकुमार।'

आश्चर्य और आनद के साथ-साथ इस विचार से सम्राट् की आँखो से आँसू निकल आये कि बेचारी को पता नही कितना समय बीच से गुज़र गया है और वह अब राजकुमार नही रह गया है। बडी मुश्किल से उसके मुह से इतना ही निकला—'तुम अभी तक जीवित हो हसा, मेरी परी ?"

परी ने मुस्करा कर कहा, 'राजकुमार, मैंने अपने पख भले ही स्वर्ग भेज दिये हो, लेकिन तुम यह शायद भूल जाते हो कि मैं परी हू और परी कभी नही मरती। तुम्ही नही, बहुत से लोग परी को तहखाने मे बद करके यही समझते हैं कि वह मर गयी है, लेकिन वह हमेशा जिन्दा रहती है। आदमी खुद अपने आपको अपराधी समझता है, हत्यारा समझता है, लेकिन परी उसे माफ कर देती है तुम मेरे लिये वही पहले वाले राजकुमार हो . '

'सच ? परी तुम सच कहती हो !' सम्राट पागलो की तरह परी के दोनो हाथ पकडकर पूछने लगा। अचानक उसने देखा कि उसकी परछाँई परी की आँखो मे पड रही है, उसने घूमकर पीछे निगाह डाली तो दिवार पर लगे शीशे मे उसकी छाया खडी थी। बरसो से शीशा साफ नही हुआ था और धूल जमी थी, लेकिन राजा की परछाँई पहचानी जा सकती थी। अब उसको खुशी सँभालना मुशकिल हो गया—'अरे इस शीशे मे तो मैं वही पहले वाला राजकुमार हूँ।' वह पागलो की तरह हँसने लगा।

अब परी ने चिन्ता से पूछा 'अरे, यह तुम्हे क्या हो गया राजकुमार ?

कुछ नही . कुछ नही...आज मैं किसी को भी नहीं बता सकता कि आज मुझे क्या कुछ मिल गया है। सारे धन दौलत और राज्य जीतकर भी जिस गडे काँटे को दिल से नही निकाल पाया वह मुझे आज किसी दूसरे के साथ हुई घटना लगती है। ऐसा सतोष तो मैंने वर्षों से नही जाना। लगता है आज जैसे मेरे पख निकल आये हैं, तुमने जो स्वर्ग

लौटा दिये थे वे ही मुझे मिल गये है और मै उडने लगूगा ।'

और एकदिन सारी प्रजा ने सुना सम्राट और सम्राज्ञी दोनो अपने पुत्र विवेक और पुत्री करुणा को खोजने, छोटे राजकुमार से मिलने निकल गये ह । किसी ने आकर उनका अता-पता दिया था ।